THE BOOK WAS DRENCHED

UNIVERSAL
LIBRARY

OU_180527

UNIVERSAL
LIBRARY

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H83/V31P10 Accession No. H2974

Author वर्मा, केशव चंद्र

Title मोहब्बत, मनोविज्ञान और मूर्छा

This book should be returned on or before the date last marked below.

मोहब्बत, मनोविज्ञान और मूँछदाढ़ी

[एक हास्य कथा प्रयोग]

प्रयोग करने वाले

केशव चन्द्र वर्मा

लखनऊ

दि अपर इंडिया पब्लिशिंग हाउस लिमिटेड

१९५५

मुद्रक:-महाबीर प्रसाद, प्रेम प्रेस, कटरा, इलाहाबाद

भूमिका

लिखते-लिखते यह ख्याल आया कि भूमिका क्यों लिखी जाय? अगर भूमिका लिखना या लिखवाना फ़ैशन हो सकता है तो उसका न लिखना भी एक फ़ैशन हो सकता है। अगर भूमिका लिखता तो भी यही लिखता कि यह अपने ढंग का अकेला और अनूठा उपन्यास है; हास्य का ऐसा पहिला प्रयोग है, 'भूतो न.....', मैं अफ़लातून हूँ, और कोई अफ़लातून नहीं है; मेरे तीर के सामने कामदेव के पंचशर बेकार हैं—आदि आदि! आप पढ़ कर न सिर्फ़ उपन्यास की बुराई करते बल्कि भूमिका को भी बुरा भला कहते। ऐसी हालत में सबसे सस्ता नुस्खा यही है कि मैं भूमिका बेचारी को गाली खाने से बचा लूँ।

५० ए, टैगोर टाउन
इलाहाबाद
जून १९५५

केशव चन्द्र वर्मा

Newman only cried out for light
in the gloom of a sad world;
Dickens gave it.

—*Stephen Leacock.*

यह प्रेमगाथा

सरोज को

इस कथा के सभी पात्र और घटनाएँ
एकदम झूठी और कल्पित हैं –

तब तक

जब तक कोई ठीक इसी तरह रह कर
इस पूरी कथा को सच्ची साबित करने के फेर
में न पड़ जाय !

मुझे पूरी उम्मीद है कि जो कहानी मैं आपको सुनाने जा रहा हूँ उसे आप भी नहीं मानेंगे ! ठीक उसी तरह जिस तरह पहिले पहल मैंने भी नहीं मानी थी ! लेकिन जिस तरह न मानते हुए भी यह अफवाह रूपी कथा, मैं आपको सुनाने के लिए कमर कस रहा हूँ, हो सकता है, एक दिन आप भी उसी तरह इस पर पूरा अविश्वास करते हुए, इसके काम आएँ। इसी आशा पर मैं आपको यह कहानी जरूर सुना-ऊँगा ! शुरू करूँ ?

०

एक

'नार्मल आ गया !' थर्मामीटर निकाल कर नर्स सुब्बारंजिनी ने मुस्कराते हुए दामोदर विष्णु घोरपडे की ओर को देखा ।

'नार्मल' का नाम सुनते ही पिछले छः दिन से बुखार में पडे एडवोकेट दामोदर विष्णु घोरपडे सिरहाने की तकियों का सहारा लेकर बैठ गए ! उनकी आँखो मे एक अजीब सी करुणा विगलित दया याचना दिखाई पड रही थी । बोले :

'तुमने इन छः दिनों मे कितना कुछ किया है । फिर सुब्बारंजिनी ! नार्मल न आता तो भला जाता कहाँ ? . तुमने अपने दिन को दिन नही जाना और रात को रात नही माना ! ड्यूटी के अलावा भी हर वक्त तुम मेरे ही पास, मेरी ही सेवा मे लगी रही। मैं इसमे उऋण नही हो सकता !'

नर्स सुब्बारंजिनी इस तरह की बातें प्रायः अस्पताल के चंगे हुए रोगियों से सुनने की आदी हो गई थी। वह यह भली भाँति जानती थी कि मर्द हमेशा इसी तरह की प्रशंसा करता है वह चाहे रोगी हो या राजा हो। अपनी मुस्कराहट को अक्षुण बनाए रखती हुई सुब्बारंजिनी ने कहा——

'नही वकील साहब! मैंने ऐसा कुछ नही किया है जिसके लिए आप इतने कृतज्ञ हों। मैंने तो अपना फर्ज अदा किया है। इसके अलावा आपका ध्यान सब ने इसीलिए रक्खा कि कैप्टन चारिया खुद आप मे 'पर्सनल इन्टरेस्ट' लेते हैं।'

'हाँ! लेकिन और किसी ने इतना क्यों नही किया जितना तुमने अपनी काया को गलाया! यह जो मेरा बुखार उतरा है यह सब तुम्हारी ही तपस्या तो है!'

'जिस दिन मिसेज़ हरनाम जी आपको इस बेड' पर लिटा गई थी उसी दिन उन्होने मुझे आपका केस सहेजा था! मैं तो उन्ही की आज्ञा का पालन कर रही थी।' सहसा नर्स सुब्बारजिनी ने अपने मन में यह अनुभव किया कि वह जो कुछ कह रही थी वह हूबहू सच नही था!

उसी वक्त कमरे मे एक अधेड़ उम्र, गौर वर्ण के, थुलथुल शरीर वाले व्यक्ति ने एप्रन पहिने, गले मे डाक्टरी आला लटकाए हुए प्रवेश किया। यही डाक्टर कैप्टन एस० चारिया थे। कैप्टन एस० चारिया, पजाब के रहने वाले थे। उनकी एक खास तरह की 'हो हो' करके हँसने की आदत से सारा 'सुभद्रा देवी धर्मार्थ अस्पताल' वाकिफ़ था। दूर से ही लोग जान जाते थे कि कैप्टन चारिया आ रहे है। कमरे मे घुसते घुसते उनकी हँसी की ध्वनि गूँजने लगी। उनकी यह 'हो हो' मार्का हँसी घोरपडे को भी बहुत अच्छी लगती थी।

'कहो भई घोरपड़े! अब क्या हाल है?...क्यों सुब्बारंजिनी, 'टेमप्रेचर कितना है?' हँसते हुएडाक्टर चारिया ने नर्स से सवाल किया।

सुब्बारजिनी के नार्मल बताने पर कैप्टन चारिया आगे बोले--

'बस भई! अब तू चंगा हो गया! छोड़ खाट! तुमसे मैने कितनी बार कहा कि कुछ 'फल शल' खाया करो! उसी से तुम्हारी हेल्थ बनेगी! तुम जानते हो! मैं तो यही कहता हूँ कि आदमी में जो भी खराबी होती है वह खाने पीने को ठीक कर देने से ठीक हो सकती है।'

घोरपडे ने मुस्करा कर जवाब दिया—

'हाँ डाक्टर साहब, मिस सुब्बारंजिनी ने जितनी मेहनत की है, उसका तो यही फल हुआ है कि मै चंगा हो रहा हूँ।'

डाक्टर चारिया भी यह सुन कर मुस्कराए। उन्होंने कुर्सी पर बैठते हुए कहा—

'भई! हरनाम बेहद परेशान थी। हर वक्त वह अस्पताल आ आकर तुमको देख जाया करती थीं। हरेक नर्स को उन्होने अलग अलग हिदायते दे रक्खी थीं। तुम्हारी जरा सी बीमारी थी लेकिन उसने तो सिर पर सारा अस्पताल उठा लिया था! बात यह है कि दवा से आदमी एकदम चंगा हो नही सकता! तुमको तो कुछ हरी सब्जी खाना चाहिए। उससे तुम एकदम ठीक हो जाओगे। तुम्हारे अदर विटामिन ए और डी की कमी है! मुझे देखो! आखिर मै भी तो खाने के ही बल पर इतना मोटा ताजा शरीर बनाए रखता हूँ।' इतना कहकर वे फिर वही हँसी हँसने लगे।

आला लगाकर डाक्टर चारिया ने घोरपडे का सीना देखा और सुब्बारंजिनी से फल का जूस और ग्लूकोज देने के लिए कहते हुए उन्होंने कमरे से बाहर की तरफ कदम बढाए।

घोरपडे ने सुब्बारंजिनी से कहना शुरू किया—

'आप फल वल का चक्कर जाने दीजिए। डाक्टर चारिया की यही आदत है। वह हर बीमारी को खाने से ठीक करने के चक्कर में रहते है। मै उनको बहुत दिनों से जानता हूँ। उन्हीं का कहना मानूं तो मूली की रोटी और सरसो के साग को मै संसार का सर्वोत्तम भोजन मानूं!'

सुब्बारंजिनी चुप चाप एक गिलास मे संतरे का रस छानती रही ।

'कैप्टन चारिया बडे अच्छे आदमी है। मिसेज़ हरनाम जी भी मेरा बहुत ध्यान रखती है। लेकिन इनकी कुछ बातें तो इतनी अजीब लगती है कि मै क्या कहूँ! मेरी तंदुरुस्ती देखकर कहते है कि ऐसी तदुरुस्ती तो सिर्फ औरतों को शोभा देती है! भला बताइए क्या मै इतना दुबला हूँ ?'

सुब्बारंजिनी चुपचाप गिलास मे संतरा निचोडती जाती और सुनती जाती। उसे घोरपडे के मुह से यह सब बातें सुनने मे मजा आता था।

'आप जानती है डाक्टर चारिया कहते है कि मै रोज सुबह उठकर हरी सब्जी चबाऊँ और वर्जिश करूँ! मै हँस पड़ता हूँ तो वे कहते ह कि भला आप जैसे नौजवान इस देश की आजादी क्या बनाए रक्खेगे? दलील क्या देते है कि जब तक हर नौजवान दो तीन घण्टे वर्जिश करके अपने बदन को नही बनाएगा तब तक खोया हुआ पंजाब वापस नही लिया जा सकता!' इतना कह कर वकील घोरपड़े जोर से हँसने लगे।

सुब्बारजिनी की मुस्कराहट भी कुछ स्वरों में आ गई। उसने गिलास घोरपड़े के हाथों मे पकड़ा दिया। रस पी चुकने के बाद घोरपड़े ने सुब्बारंजिनी से फिर पूछा—

'आप डाक्टर चारिया और श्रीमती हरनाम जी को कब से जानती है ?

सुब्बारजिनी बोली—

'हरनाम जी को मै तबसे जानती हूँ जब वे दिल्ली में मेरे साथ

अस्पताल में काम करती थी। कैप्टन चारिया की हरनाम जी से शादी कैसे हुई यह भी मैं जानती हूँ। स्वयं श्रीमती हरनाम जी ने ही मुझे यह सब बताया है!'

'अच्छा? कैसे शादी हुई, पता है आपको? कुछ रोमास था क्या?'

'नहीं डाक्टर चारिया ने तो एक ज्योतिषी के कहने पर हरनाम जी से विवाह किया था। उसकी बात सच ही निकली। डाक्टर चारिया तो रावलपिंडी के रहने वाले थे, और हरनाम जी दिल्ली की ही है। पंजाब में तो पहिले बहुत सी ऐसी डिगरियाँ मिल जाया करती थी जिनका कुछ भी माने मतलब नही होता था लेकिन उनसे हरेक डाक्टर अपना साइन बोर्ड खूब भर लेता था। ऐसी ही बहुत सी डिगरियाँ डाक्टर चारिया के पास भी थी। डाक्टरी की ये सब डिगरियाँ लिख लेने के बाद वे पिछली लड़ाई में डाक्टर होकर भरती हो गए। वहीं वे कैप्टन हो गए। मगर लडाई खत्म होते ही वे निकाल दिये गए। दिल्ली लौटने पर उन्होंने अपनी डाक्टरी चलाने की बड़ी कोशिश की मगर दिल्ली ने इनकी एक न मानी। वहीं दिल्ली में इनकी मुलाकात एक ज्योतिषी से हुई। सब तरफ से हार कर इन्होंने उस ज्योतिषी के ही पाँव पकडे। इनकी हाथ की रेखा देख कर ज्योतिषी ने बताया कि अगर वे शादी कर लें तो उनकी किस्मत उस बीबी की बदौलत कुछ बदल सकती है। भगवान की मरजी कि उनकी मुलाकात किसी तरह से मिस हरनाम सेठ से हुई। वे भी मेरे ही अस्पताल में नर्स थी। डाक्टर चारिया ने किसी तरह अपनी डिगरियों के बल पर मिस हरनाम सेठ को पटा लिया। उन्होंने हरनाम जी को यह बताया कि वे लगभग अविवाहित ही हैं क्योंकि यद्यपि लड़ाई के दरम्यान में वे कभी बाहर

एक ईसाई औरत से शादी कर चुके थे मगर बाद में उसे फिर उन्होंने तलाक दे दिया था और हिन्दोस्तान अकेले वापस चले आए थे। उनका मन डाक्टर चारिया में रम गया और उन्होंने उनसे शादी कर ली! इस तरह मिस हरनाम सेठ, मिसेज़ कैप्टन चारिया हो गईं।

'लेकिन फिर यहाँ, बनारस में कैसे आकर बस गए?'

'इसकी भी एक कहानी है। इसीलिए तो कहती हूँ कि ज्योतिषी ने जो कुछ कहा था वह एकदम सत्य हुआ। मिस हरनाम सेठ की सेवा से दिल्ली के मारवाड़ी परिवार की एक महिला किसी बड़े कठिन रोग से मुक्त हुई थी। अच्छा हो जाने के बाद वे मारवाड़ी बन्धु इसके लिए कुछ करना चाहते थे--ठीक उसी तरह जिस तरह हर मारवाड़ी लाभ होने पर कुछ करने की सोचता है। कुमारी हरनाम सेठ ने, जो अब श्रीमती हरनाम चारिया हो गई थी, उन्हें समझाया कि वे एक अस्पताल खोल दें जहाँ 'दीन दुखियों' की निस्स्वार्थ सेवा हो सके। अस्पताल खोलने की जगह तै हुई बनारस। अब उस निस्स्वार्थी सेवा के लिए किसी 'निस्स्वार्थी डाक्टर' की जरूरत पड़ी। आप समझ ही सकते हैं कि उसके लिए कैप्टन चारिया से बढ़कर निस्स्वार्थी आदमी कहाँ मिल सकता था? इस तरह देखते देखते डाक्टर एस० चारिया इस 'सुभद्रा देवी धर्मार्थ अस्पताल' के इंचार्ज डाक्टर हो गए। कैप्टन चारिया चूंकि काफी बुद्धिमान हैं और पहिले की मुसीबत झेले हुए हैं इसीलिए उन्होंने उन मालिकों से तै कर लिया कि वे यावज्जीवन मालिकों की तरफ से कभी भी निकाले न जायँगे!'

'फिर आप यहाँ कैसे आईं?'

'यह तो बिल्कुल ही साफ़ है। हरनाम जी चूंकि मुझे बेहद चाहती

थी और उनको मैं भी बडी बहन की तरह मानती थी इसलिए जब उन्होने अपने पास रहने के लिए बुलाया तो मै यहाँ आ गई। कैप्टन चारिया ने मुझे इसी अस्पताल में तब से लगा दिया है ।'

नर्स सुब्बारंजिनी ने सेब की फाँकें काट काट कर घोरपडे जी को खिलाना शुरू कर दिया था। घोरपडे जी कह रहे थे—

'देखिए ! आप बेकार मुझे इतना सेब खिलाती पिलाती जा रही है। मै अपना वज़न सदा एक सा रखता आया हूँ। आज तक उसे बढने नही दिया। आप की जिद्द पर मेरा यह नियम टूटता जा रहा है ।'

सुब्बारंजिनी ने दूसरी फाँक बढाते हुए कहा—

'खाइए भी ! आप तो जैसे हर चीज तौल तौल कर करते है । क्या मनोविज्ञान पढने वाला इसी तरह रहता है ? आप तो वकील भी हैं । आप को तो दुनियाँ की तरह भी काम करना चाहिए। खाइए ..।' उसे आज उनका नियम तोडवाने में एक आनन्द मिल रहा था।

घोरपडे जी कुछ गंभीर हो उठे। उन्होंने कहा—

'देखिए मनोविज्ञान हमारे मानव मन के लिए अत्यन्त शुभ वस्तु है । बिना इसके तो हम जीवन की गुत्थियों को सुलझा ही नहीं सकते। वकीलों ने आजतक कभी इस दृष्टिकोण से देखा ही नही । इसीलिए उन्हें बहुत कुछ झूठसच मिलाना पडता है । इस विषय में अब मै कुछ अत्यन्त महत्वपूर्ण गवेषणाएँ करने जा रहा हूँ । नर और मादा के संबंधों पर इधर मेरे विचार एक नए दृष्टिकोण से सामने आ रहे हैं। अचेतन मन का रहस्य मै अब दुनियाँ के सामने खोल कर रक्खूंगा । कभी आप फुर्सत से रहिएगा तो मै आपको मनोविज्ञान के गूढ़ अर्थ समझाऊँगा।'

जैसा कि जाहिर था, नर्स सुब्बारजिनी उनकी बातों से कुछ भी नहीं समझी। उसने घड़ी की ओर देखा और उठ कर खडी हो गई। वकील साहब से उसने अब आराम करने को कहा और दरवाजे पर जाली का परदा ठीक करके वह कमरे के बाहर निकल गई।

०० ०० ००

अब आइए दूसरा दृश्य देखिए।

यह एडवोकेट दामोदर विष्णु घोरपडे के घर की बैठक है। कमरा अगर बत्तियों और सिगरेट के धुएँ से भरा हुआ है। मेज़ पर कुछ चाय के प्याले है। सामने के तख्त पर श्री गजानन चौधरी बैठे हे। उन्ही के पास महेन्द्र सिंह भी तकिये का हल्का सा सहारा लिए जमे हुए है। एक कुर्सी पर घोरपडे जी और बगल की कुर्सी पर श्री कृष्ण माधव जी दिखाई पडते हैं। गजानन चौधरी–यथा नाम तथा गुण। महेन्द्र सिंह-नाम की विभीषिका चेहरे पर। कृष्ण माधव जी–साँवला चेहरा और दुबला पतला शरीर। अन आप की आँखो पर मे परदा उठता है।

कृष्णमाधव––लेकिन घोरपडे जी इस लेख मे तो आपका दृष्टिकोण-ही बदल गया है। नर और मादा के विषय में तो आपकी धारणाएँ ही बिल्कुल उलट सी गई है।

(दामोदर जी का मुस्कराते रहना)

गजानन–(तखत पर कुछ हुमकते हुए) हाँ, आखिर आप तो कहते थे कि मैं उस नीत्शे को मानता हूँ जिसने कहा कि हर मादा से जब मिलना चाहिए तो अपने हाथ में एक कोडा लेकर। अब आखिर क्या बात हो गई है?...हम लोग तो अब भी उसी

बात को मानते चले जा रहे है और आप है कि रोज़ बदलते चले जा रहे है। आप कही टिकें तो आपके साथ दूसरे भी आये।

कृष्ण माधव–आखिर आपने तो अपने इन निष्कर्षो को तमाम लोगो से मिल जुल कर, यहाँ तक कि 'जू' मे जाकर पशुओ तक पर 'एक्सपेरीमेंट' करके निकाला था। अब आप क्या वह सब कुछ नही मानते?

(दामोदर जी को पूर्ववत् मुस्कराते देखकर महेन्द्र नारायण जी का बोलना।)

महेन्द्र–नही दामोदर जी, आपको यह बात साफ करनी पडेगी कि आखिर आप नर और मादा के प्रति क्या दृष्टि कोण रखते है क्योकि वह 'पालिसी' का सवाल हो जाता है।

दामोदर–देखो मित्रों ! अब मै क्या कहूँ ? आदमी के विचार सदा बदलते रहते है। यदि वह न बदले तो मै समझूंगा कि वह दिमाग एकदम ठस हो गया है। नर और मादा को मात्र नर और मादा की दृष्टि मे देखने से काम नही चल सकता। मादा कही पर नारी भी हो सकती है। माँ भी हो सकती है और पत्नी भी हो सकती है।

महेन्द्र–यह सब दस पन्द्रह दिन के भीतर आपका दर्शन और मनोवैज्ञानिक विश्लेषण कैसे बदल गया है, इस पर आपको साफ बाते करनी होगी जनाब।

कृष्ण माधव–(बात काटते हुए) नही नही ठीक तो है महेन्द्र जी। देखिए हो सकता है कि मादा और स्त्री में फर्क हो। घोरपड़े जी की बात भी तो पूरी सुन लीजिए।

गजानन–(खीजते हुए) तो यह नर मादा सबंधी खोज कहीं पर स्त्री के प्रति आपका आकर्षण तो नही व्यक्त करता ?

दामोदर–तुम भी कैसी बाते करते हो गजानन ? स्त्री और मादा मे मै बुनियादी फर्क मानता हूँ इसीलिए तुमसे कहता हूँ । स्त्री तो अपने साथ एक संस्कार लेकर चलती है । स्त्री एक परम्परा है किन्तु मादा तो संस्कारच्युत एक जड पदार्थ है। इसमें कोई चाहे रस ले या आकर्षण हो, लेकिन उसका दृष्टिकोण नही बदलेगा—वह तो सदा वैज्ञानिक ही रहेगा। मै नर मादा की जगह नर-नारी को अधिक सुरुचिपूर्ण मानता हूँ।

गजानन–(हँसते हुए) हाँ अब मानने लगे होगे।

दामोदर–देखिए ! विराट व्यक्तित्व का निर्माण करने के लिए यह आवश्यक है कि नर का नारी के प्रति एक सहज मानवीय दृष्टिकोण रहे । इसीलिए मैंने इस मनोवैज्ञानिक तथ्य को इस रूप मे ग्रहण किया है। इसमें हँसने की कोई बात नही ।

कृष्ण माधव–हाँ हाँ इसमे हँसने की बात नही है । लेकिन फिर आप तो अचेतन की बात भी उठाते है घोरपडे जी।

महेन्द्र–वह सब ऐसे ही है।

दामोदर––नही नही मै कह रहा हूँ कि अचेतन ही वह प्रेरणा शक्ति है जो नारी के प्रति सहज रुझान पैदा करती है । अभी क्या है, आप इसे तब समझेंगे जब मै कोर्ट में इसे प्रमाण के रूप में रक्खूंगा और केस जीत कर दिखा दूंगा।

गजानन––और पशु जीवन ?

दामोदर––मानव विकास क्रम चूंकि एक चक्र में चल रहा है इसलिए बहुत सम्भव है कि पशु जीवन हमारे जीवन को फिर उसी तरह

छा ले जिस तरह वह पहिले छाया हुआ था । इसलिए मैं पशु जीवन को अब भी मानव जीवन का एक पूरक अग मानता हूँ।

महेन्द्र—लेकिन आपकी 'थ्योरी' तो अचेतन और पशु जीवन के साथ अखबार को भी समेटती है ।

दामोदर—हॉ हॉ क्यों नहीं। आज अखबार हमारे मन को बहुत कुछ ढालता है। इसलिए वह तो हमें निर्देशित करता है। वस्तुतः इन्ही तीनो के सम्मिश्रण से मानव प्राणी का जीवन दर्शन बनता बिगडता है। हमारी मूल प्रवृत्तियाँ इन्ही तीनों-अचेतन, पशु जीवन, और अखबार से ही परिचालित हैं।

महेन्द्र—मै तो इसको नही मानता। नर और मादा के संबंधों में इधर जो आपने अपना दृष्टिकोण बदला है उसे मै मानने से इन्कार करता हूँ।...क्यों?...यह फिर बताऊँगा।...चलो गजानन भाई।.... (गजानन उठकर खडे हो जाते है फिर दोनो नमस्कार करके चल पड़ते है । अकेला पाकर कृष्ण माधव जी फिर बोलते हैं ।)

कृष्णं माधव—आखिर महेन्द्र जी आज मान क्यों नहीं रहे थे?

दामोदर—शायद मै ही ठीक से नही कह पाया।...देखो कृष्ण माधव, मै तुमसे कहता था न, अगर आदमी का 'वेट' बढ़ जाय तो उसकी बुद्धि मोटी हो जाती है । न वह दूसरे की बात समझ पाता है और न अपनी बात ठीक से समझा पाता है। मेरा वज़न इधर जो दो पाउंड बढ गया है, उसका फल आज प्रत्यक्ष दिखाई पड गया है। मेरा तो ख्याल है कि इधर महेन्द्र जी का भी वज़न जरूर बढ़ गया है ।

कृष्ण माधव—हाँ हो सकता है। रामलाल एण्ड संस के यहाँ से एक

सप्ताह पहिले इनको एक शीशी टॉनिक की मैंने ही दिलवाई थी। कहते थे दिमागी कमजोरी है।

दामोदर—क्यो दिलवाई? वही तो सब झगड़े की जड़ है। अब जब तक हम दोनों का दिमाग और 'वेट' नार्मल न होगा तब तक एक दूसरे की बात समझना बड़ा कठिन होगा।

इसके बाद दोनों घूमने चले गए। आपकी आँखों पर फिर परदा गिर जाता है।

०० ०० ००

शाम का वक्त है बनारस के चित्रा टाकीज के सामने काफी भीड़ भाड़ है। कोई ऐसी तस्वीर लगी है कि लोगों को आज अपनी रोटी की फिक्र भी नही है। सब तरफ एक हंगामा का आलम छाया हुआ है। इतन मे एक रिक्शा आकर रुकता है। रिक्शे तो कई आ आ कर रुक रहे है मगर यह वह रिक्शा है जिसे आपको देखना चाहिए। इसमें से उतर रहे है दामोदर घोरपड़े। उतरे और इधर उधर चौकन्ने हो देखते हुए से एक तरफ खड़े हो गए है। अब जितने भी रिक्शे रुकते उन सब पर घोरपडे जी की निगाहे गड़ी हुई है। आखिर इस रिक्शे को देख कर वह खुश हो गए। इसमें से मिस सुब्बारजिनी उतर रहीं हैं। उन्होंने भी इधर उधर देखना शुरू किया। लपक कर घोरपड़े जी पास पहुँचते है और कहते है—'आ गईं आप, मुझे तो बड़ा डर लग रहा था कि कहीं डाक्टर चारिया रोक न दें।'

'कैप्टन चारिया को तो हमने बताया भी नहीं। झुटपुटा होते ही हम घूमने चल दिए। हरनाम जी से कह दिया था कि देर में लौटूंगी। बस!'

'आइए पिक्चर शुरू होने वाली है। यह लीजिए दो टिकट ले

लीजिए। उधर लेडीज़ के लिए सुविधा है।' पर्स से पैसे दे देते हैं।

मिस सुब्बारजिनी जल्दी जल्दी टिकट ले आती है। टिकट लाकर चलने के लिए कहती है।

'नहीं। मेरा टिकट दे दीजिए। मैं अलग बैठूंगा। जब रोशनी बुझ जायगी तब आपके पास आ जाऊँगा। मेरे लिए अपने बगल में एक सीट रोके रखिएगा।'

'क्यो?'

'हर बार क्या वही बात बतानी पड़ेगी? पिछली बार ही आपको बता दिया था कि रोशनी रहते आपके साथ नही बैठूंगा—दूसरे बहुत से वकील पिक्चर मे आते है।'

'अच्छा!' कह कर दोनो सिनेमा हाउस के भीतर अलग अलग घुस जाते हैं।

०० ०० ००

कैप्टन डाक्टर चारिया के घर के सामने वाले चबूतरे पर उस दिन दो चार कुर्सियाँ पड़ी हुई थी। एक मेज पर सामने कुछ संतरे और कटे हुए सेब रक्खे थे। कुर्सियो पर कैप्टन चारिया, श्रीमती हरनाम चारिया और वकील दामोदर विष्णु घोरपड़े बैठे हुए थे। बात-चीत में ठहाको का सिलसिला जारी था। थोडी देर में चाय आ गई। चाय के प्याले सबके हाथों में आ गए।

श्रीमती हरनाम चारिया ने कहा—

'वकील साहब तो अगर आप का यह अचेतन मान भी लूँ तो फिर औरतों के बारे में जो आप कहते रहे हैं, वह तो सब झूठ हो जायगा।

चाय की चुस्की लेते हुए घोरपड़े हँस पड़े—

'आप भी भाभी जी कैसी बातें करती हैं ? औरत औरत ही है वह चाहे कुछ हो जाय। मै तो विशुद्ध वैज्ञानिक ढग से उन्हें देखता हूँ ।

कैप्टन चारिया दोनो की बातें बहुत देर से सुन रहे थे । एकाएक अपने पजाबी लहजे मे 'हो हो' करके हँसते हुए बोले—

'यार तुम भी अजीब अहमक आदमी हो ! अरे मियाँ शादी कर लो ! मौज से जिन्दगी बिताओ ! कहाँ रात दिन तुम गधों और घोड़ो के बीच अपनी जवानी बरबाद कर रहे हो ! हज़रत ! गधे और घोड़े भी अपनी जवानी मे इस तरह की बातें नही करते जिस तरह की बदहवासी तुम पर छाई हुई है ! संतरे का जूस पियो। अपने आप जवान हो जाओगे !! अरे साहब ! औरत कुछ चीज ही और होती है ! है न हरनाम ?'

अपना भाषण समाप्त करते ही डाक्टर चारिया इतनी जोर से हँसने लगते थे कि उनकी मोटी तोद पतलून की सीमाओं को तोड़ फोड़कर बाहर निकलने के लिए उछलने कूदने लग जाती। अपना हर भाषण समाप्त कर लेने के बाद वे अपनी पत्नी से कहते—

'भई, हमारे प्याले मे थोडी और शकर डालना हरनाम !'

घोरपड़े उनकी इस आदत से वाकिफ हो गये थे। जब कभी वे भाषण देने लगते तो वे चम्मच में चीनी लिए तैयार रहते। जैसे ही उनका भाषण समाप्त होता वह 'स्वाहा' कहकर उनके प्याले में चीनी डाल देते ! इस पर तीनों ही थोड़ी देर के लिए हँसा करते।

डाक्टर चारिया ने फिर एकदम सीधी बात चलाई—

'भई देखो ! तुमने सुब्बारंजिनी को तो अच्छी तरह देख लिया है। इतनी बार मेरे घर पर तुमने देखा । अस्पताल मे देखा। अब

तो तुम लोग सिनेमा वगैरह घूमने भी जाते हो! अच्छी तरह उसे जान लिया होगा। उससे शादी हो तो कैसा रहे?'

घोरपडे एकदम चौक पडे। उनके मन का चोर इतनी जल्दी पकड़ लिया जायगा, यह वह नही जानते थे। फिर भी वे घबड़ाए नहीं सिर्फ मुस्कराते रहे।

घोरपड़े जी की आँखों के सामने पच्चीस वर्षीया सलोनी सुब्बारजिनी का चेहरा नाचने लगा। मिस सुब्बारजिनी का साँवला रंग लेकिन भरा पूरा गुदगुदा शरीर और फिर उसकी बड़ी बड़ी आँखें जो कितने ही रोगियों को अच्छा होने की प्रेरणा दे चुकी होगी, वह सब कुछ घोरपड़े के मन पर छा गया। नर्स होने के बावजूद भी उसमें कितनी कलात्मकता थी। जिस सुरुचिपूर्ण ढग से वह बाते करती थी वह घोरपड़े जी के लिए एक भयानक आकर्षण बन गया था।

श्रीमती हरनाम चारिया ने सूत्र आगे बढ़ाया—

'तुम तो सुब्बारंजिनी को जान ही गए होगे। बेचारी की माँ अब भी कुर्नूल मे कही रहती है। किसी तरह मेहनत मजदूरी करके उसने इसे पढ़ाया लिखाया। बचपन से ही इसे 'फ्लोरेस नाइटिंगेल' का जीवन बड़ा अच्छा लगता था। आज तक वह उसी से प्रभावित है! बड़ी होने पर यह नर्स बन गई ताकि अपने पैरों पर खड़ी हो सके। इधर उत्तरी हिन्दुस्तान में जब से रही तब से तो यह खूब हिंदी बोलना चालना भी सीख गई। अब तो खूब लिख पढ़ भी लेती है। मन से इतनी आर्टिस्टिक है कि इसने अपना नाम बदल कर सुब्बारजिनी कर लिया है। कहती है रंजिनी कहलाना अच्छा लगता है। काम पर से लौटती है तो बिना एकाध घण्टा वायोलिन बजाए आराम नही करती! मुझे तो बड़ी अच्छी लगती है! क्या कहूँ मुझे तो यह तुम

दोनो का जोड़ा भी बहुत अच्छा लगता था लेकिन तुम शादी के लिए ही तैयार नही हो! शादी कर लो, तुम्हारा घर भी बस जायगा! ऐसी लड़की आसानी से ढूंढे नहीं मिलेगी।'

डाक्टर चारिया ने चाय का दूसरा प्याला भरते हुए कहा—

'नही भई हरनाम! तुम समझती नही हो! अपना यह दामोदर अब तक यह जानता नही था कि औरत होती क्या चीज़ है? अब समझ गया है! अब जान गया है कि औरत में ऐसा क्या होता है कि जिसके पीछे सब दीवाने रहते है! इसी से कहा था मैंने यार! यह सब तुम्हारी 'साइकूलीजी' और 'पैथूलीजी' एक तरफ और जनाब.....' पंजाबी लहजे मे अँग्रेजी नामों को लेत हुए जैसे किसी निगूढ़ संकेत को पाकर वे फिर 'हो हो' करके हँस पड़े।

अब घोरपडे के बोलने की पारी थी। कुछ-कुछ शरमाते हुए आँखें नीची करके बोलने लगे—

'देखिए सिद्धात रूप मे तो मै औरत को चीज कुछ और मानता हूँ लेकिन रंजिनी जी की बात और है। उन्होने तो अपने आपको बहुत सुसंस्कृत कर लिया है! उनके बारे में मुझे खास आपत्ति नहीं है। मैं तैयार हूँ। लेकिन उनकी माँ अपनी आध्र बेटी की शादी किसी महाराष्ट्र से करने को भला तैयार होगी? इस वक्त हम तीनों ही एक दूसरे की कट्टरता के बारे में कुछ नही जानते! आप लोग पंजाबी, वे आंध्र और मै महाराष्ट्र! फिर यह घटना घट रही है उत्तर प्रदेश में! यह तो एक तरह का अंर्तप्रांतीय सांस्कृतिक आदान प्रदान है— अर्तप्रातीय सम्मेलन कह लीजिए!'

घोरपड़े जी अपने इस मजाक पर खुद ही हँस पड़े।

श्रीमती हरनाम चारिया ने कहा—

'खैर वह जाने दीजिए! अगर आप तैयार हो तो आगे सारी बाते हो जायँगी। मै उसकी माँ को तैयार कर दूँगी। आपके ही घर वाले कही न माने, तो क्या होगा?'

घोरपडे ने कहा—

'मेरा कौन यहाँ बैठा है? एकाध है भी सो पूने और नागपूर में है। यहाँ तो जो मै कहूँ वही मेरे घर वालो की भी राय माननी चाहिए।'

डाक्टर चारिया फिर बोल पड़े—

'बस बस हरनाम! अब बहस मत करो! इतिजाम करो! रजिनी की माँ को भी 'इन्फार्म' कर दो! ठीक है। 'इण्टर स्टेट मैरिज' होनी चाहिए और वह भी 'हिन्दुस्तान' में ही ठीक रहेगी! यहाँ का आदमी बडा अच्छा होता है। दूसरों को देख देख खुद भी समझ लेता है!'

डाक्टर चारिया उत्तर प्रदेश को हमेशा 'हिन्दुस्तान' कह कर पुकारते थे। 'हिन्दुस्तान' का मतलब समझकर घोरपडे फिर मुस्करा पडे।

पूने के दामोदर घोरपडे अब बनारस के दामोदर विष्णु घोरपडे उर्फ वकील साहब हो गए थे। इस घटना के पीछे बात सिर्फ इतनी सी थी कि दामोदर के पिता विष्णु पाण्डुरंग घोरपड़े जजी से पेंशन पाने के बाद सपत्नीक काशी निवास करने आ गये थे। दामोदर की शिक्षा काशी में हुई। जज विष्णु पाण्डुरंग घोरपडे अपने लडके को भी हाईकोर्ट का जज होते हुए देखना चाहते थे इसीलिये उन्होंने उसे वकालत की शिक्षा दिलवाई और वकालत करने के लिये मजबूर किया। मगर भाग्य की बात कि जब तक घोरपड़े जी ने वकालत पास की,

उसी बीच एक दिन विष्णु पाण्डुरग घोरपडे ने अपनी पत्नी के साथ गंगा माता की गोद मे जलसमाधि ले ली । दामोदर घोरपडे बडे सुलझे हुए आदमी थे। पिता के जोर देने पर उन्होंने वकालत पास जरूर की लेकिन जमकर वकालत कभी नही की। गाहे बगाहे कचहरी जा जाकर उन्होने सिर्फ 'वकील' साहब' का नाम कमा लिया था। खुद बाप की कमाई ही इतनी थी कि जिदगी भर वह खा पी सकते थे! उनकी रुचि मनोविज्ञान की तरफ जरूरत से ज्यादा थी। वे उसी के अध्येयता के रूप मे प्रसिद्धि पाना चाहते थे। इसीलिये उन्हे अपनी वृद्धा माता और आयुग्रस्त पिता के निधन पर कुछ विशेष शोक नही हुआ। उनका विश्वास था कि कुछ समय के बाद माता पिता का पुत्र की राह से हट जाना ही दोनों पक्षो के लिये श्रेयस्कर तथा लाजबचावकर होता है!

वकालत की तख्ती लटका कर श्री घोरपड़े अपने मनोविज्ञान मे इस तरह उलझ गए कि न तो उन्हे दीन की खबर रह गई और न दुनियाँ की। वे अपने को आचरणवादी मनोवैज्ञानिक बताया करते थे। चेतन और अचेतन मन को समझने के लिये वे वकीलों की तरह ऐसा तर्क जाल बाँधते कि जो कुछ चेतना उनमें बाकी थी, वह भी अवसर पाकर जड हो जाती थी।

आदमी के उठने बैठने, चलने फिरने में, काम करने में, न करने मे, सब चीज़ मे उन्हे एक रहस्य दिखाई पड़ता था! इसी रहस्य को वे खोज कर बाहर निकाल लाना चाहते थे। कोई आदमी किसी खास तरह का कोट क्यों पहिने है, अमुक व्यक्ति इतने लम्बे बाल क्यों रखाता है, अमुक व्यक्ति मास्टरी क्यों करता है, अमुक व्यक्ति लेखक क्यों हो गया है, इस सबका रहस्य वे इस तरह ढूंढने पर

आमादा रहते कि जैसे वे कोई खुदाई जासूस हो। इन रहस्यों के उद्घाटन के लिए वे आदमियों तक ही नही रह पाते थे। इसके लिए तो वे पशुओं की शरण में जाने से भी नहीं हिचकते थे। उनका विश्वास था कि पशु जीवन फिर लौटेगा। मानव मन उसी ओर विकसित हो रहा है।

घोरपडे अभी ताजा ताजा वकालत पास शुदा तीस वर्ष के मँझोले कद के, गोरे रग के और छान्नबे पौड वजन के आदमी थे। स्वास्थ्य अधिक बढ जाने से न सिर्फ मनुष्य भौतिकवादी हो जाता है बल्कि वह दूसरों को अपनी बातें नही समझा पाता, ऐसा उनका कहना था। इसीलिए वे अपने लिए हमेशा नपातुला भोजन ही स्वीकार करते थे। जब कभी वजन घट बढ़ जाता था तो वे अपने मनोवैज्ञानिक ढग से उसका उपचार कर लेते थे। एक बार जब उनका वजन बढ़ा तो स्वयं अपने ऊपर उन्होने अपना कलम चुरा लेने का लाछन लगा दिया था। इससे उन्हें जितना मानसिक क्लेश हुआ था, उसके फलस्वरूप उनका वजन अपने आप तीन पौड घट गया था।

नर मादा संबधी उनकी गवेषणाएँ अत्यत महत्वपूर्ण थीं। उसके सिलसिले में उन्होने कुछ इतनी रोचक बातें कहीं और लिखीं थीं कि उनके चारों ओर उनके प्रशंसको का एक बहुत अच्छा दल तैयार हो गया था। यूँ भी घोरपडे का व्यवहार, उनकी चाल ढाल, उनके कपड़ों का खास ढंग, उनके तौर तरीके सब कुछ लोगों को उसी तरह खींचते थे जिस तरह किसी प्राइम मिनिस्टिर की अगवानी में प्रेस रिपोर्टर दौड पडते है। घोरपडे को पूरी आशा थी उनका यह पशुओं का अध्ययन किसी न किसी मानव स्वभाव का वह गुह्य रहस्य खोलेगा जिससे वे संसार के सर्वोत्कृष्ट मनोवैज्ञानिकों

मे गिने जायँगे। पशुओ मे भी वे बहुत ज्यदा रुचि रखते थे । नर और मादा को आधार बनाकर नए दृष्टिकोण से वे उसे सामने रखना चाहते थे। घोरपडे जी के सभी मित्र इस मामले में उनके शिष्य थे। वैसे तो उनके शिष्यमित्र अनेक थे किंतु कृष्णमाधव जी इस तजुरबे के लिए--अपने मित्रगुरु के लिए--एक बार नर से मादा और अनेक बार मनुष्य से पशु बनने के लिए तैयार हो जाते थे। उन्हे घोरपडे जी के प्रति अटूट आस्था थी । जहाँ तक घोरपड़े अब तक पहुँचे थे वहाँ से वे एक ही बात कहते थे कि मानव मन अचेतन, पशु प्रवृत्ति और अखबार से ही निर्देशित है। इन्ही के संतुलन मे उसका भविष्य निहित है। यदि यह ठीक से जान लिया जाय तो अपराध प्रवृत्ति का पता अपने आप लग जाया करे।

मनोवैज्ञानिक होने के बावजूद घोरपडे कभी-कभी बीमार भी पड़ते थे। उनके घर से चार कदम पर यह 'सुभद्रा देवी धर्मार्थ अस्पताल' था। मात्र भौगोलिक स्थिति--अर्थात् निकटता के कारण उनका सम्पर्क इस अस्पताल से और फिर आगे चलकर कैप्टन चारिया से हुआ। चारिया मे उन्हें कुछ वे मनोवैज्ञानिक तत्व मिले जिन्हे वे अक्सर लोगों मे ढूँढा करते थे लेकिन नही पाते थे। इसीलिए डाक्टर चारिया से उन्होने अपनी मित्रता बढाई। कैप्टन चारिया इस नौजवान को पकड़ कर अक्सर समझाते कि 'देखो विटामिन डी खाने से आदमी जिद्दी नही रह जाता। 'विटामिन ए' और 'हरी सलाद' खाने से कुछ ही दिन में आदमी औरतो से विरक्ति ले लेता है। सतरे का जूस पीने से उसे स्त्रियाँ अच्छी लगने लगती है' आदि। डाक्टर चारिया हर बात का उपचार सिर्फ विटामिन की गोलियो और आहार के संतुलन से बताते थे। वे कहते थे कि उनके पंजाब में इसीलिए लोग

कम बीमार पड़ते थे क्योकि वहाँ मरीज खाने पर ज्यादा जोर देते थे ।

इसके बाद डाक्टर चारिया के घर घोरपडे जी आने जाने लगे। मिसेज़ चारिया को भी घोरपडे जी काफी पसद आए। हर आदमी जो यह सुनता कि घोरपड़ें जी आदमी को खून मांस और हड्डी का बना न मान कर अचेतन, पशु प्रवृत्ति और अखबार से बना मानते है, उनके लिए घोरपड़े जी हमेशा एक अजूबा की तरह आकर्षक रहते। मिसेज़ हरनाम चारिया ने उनको अपने घर पर बुलाना शुरू कर दिया। धीरे-धीरे घोरपडे का मन वही रमने लगा। मिसेज़ चारिया ने ही इनका परिचय नर्स सुब्बारंजिनी से कराया और चाहने लगीं कि इनका विवाह उससे हो जाय। इन्हे उसके लिए पूरी छूट भी मिली। आखिर विवाह भी तै हो गया, जैसा आप जान गए है !

इस तरह चारिया दम्पत्ति ने ऐसा प्रबंध किया कि अगले पंद्रह दिन के भीतर शादी हो गई। चूंकि घोरपडे जी अखबार को भी मानव जीवन का एक आवश्यक अग मानते थे इसलिए उन्होने अपने विवाह का समाचार बनारस के एक अखबार में छपवा दिया। उसमें यह भी लिखवाया कि 'जिन्हें इस अंर्तप्रांतीय सास्कृतिक आदान प्रदान में रुचि हो वे श्री घोरपड़े के विवाह में सम्मिलित हो सकते है ।'

खुला निमंत्रण पाकर 'हिन्दुस्तानी' शिष्यमित्रों का एक खासा दल अपनी अपनी शुभ कामनाएँ लेकर पहुँच गया। मिसेज़ हरनाम चारिया ने इस अवसर पर एक दावत का भी प्रबंध किया । अस्पताल के सारे कर्मचारी और मित्रों ने भरपेट खाया। मगर जिस तरह होटल में बैठकर डबल रोटी उड़ाने वाले बाबुओं को गेहूँ उगाने वाले किसान की मेहनत का अंदाज़ा नही हो पाता, उसी तरह इन शिष्यमित्रों

को भी यह पता नही चल पाया कि इस सांस्कृतिक आदान प्रदान के पीछे घोरपडे की कितनी मेहनत छिपी हुई है। जो कुछ भी हुआ सबने उस पर बहुत आनन्द मनाया। कुछ ने घोरपड़े जी की इस कार्यवाही को मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से देखने की भी कोशिश की लेकिन सभी आवश्यक ऑकड़े न पाकर वे अपने प्रयत्न में विफल रहे और अंततोगत्वा आश्चर्य चकित होने के अलावा उनके हाथ कुछ और न आया।

० ० ०

दो

शादी के बाद एक सप्ताह तक भेट न होने के कारण गजानन चौधरी दामोदर घोरपड़े के घर पहुँचे। दरवाजे पर ही उन्हे एक नई तख़्ती दिखाई पड़ी। लिखा था :

सेवक इस समय कार्य में व्यस्त है। कृपया अपना संदेश भृत्य से कहें।

सेवक

दामोदर विष्णु घोरपड़े

गजानन चौधरी इसे पढ कर कुछ चौके मगर उन्होंने हिम्मत करके दरवाजे की कुंडी खटखटा दी । नौकर निकला। पूछा 'क्या काम है ?'

गजानन चौधरी को कुछ बुरा लगा—

'कांम क्या है ? शादी के बाद से दिखाई नहीं पडे । बधाई देने आया हूँ। और क्या ?'

नौकर ने कहा—यही बैठक मे बैठिए । इस काग़ज़ पर आप भी अपनी बधाई लिख दीजिए।'

इतना कह कर वह एक तश्तरी में चार लड्डू और एक गिलास पानी ले आया। साथ में एक काग़ज़ भी था जिस पर कई आदमियों के नाम लिखे हुए थे। गजानन जी ने रुँधे गले से सब खा लिया और फिर पानी पीकर बिना बधाई लिखे वे बुरा मान कर जाने लगे।

नौकर ने उनसे प्रार्थना की—

साहब आप अपना नाम लिख कर ही जाइए नही तो हमारे ऊपर हुजुर बहुत बिगडेंगे। अब तक जो भी आए हैं और लड्डू खा कर गए हैं वह सब लोग अपनी-अपनी बधाई कागज पर लिख गए हैं। साहब, लिख जाइए नही तो मेरी नौकरी पर आँच आ जायगी।'

गजानन चौधरी लड्डू खा चुके थे। हार कर उन्हे बधाई वाले कागज़ पर अपने भी हस्ताक्षर करने पडे।

शादी के बाद दो हफ्ते तक दामोदर घोरपडे को कोई नही देख पाया। इस दो हफ्ने की अवधि के भी दो भाग थे। पहिला भाग एक हफ्ता एक दिन का और दूसरा भाग था सिर्फ पाँच दिन का। पहिला भाग जो एक हफ्त एक दिन का था वह तो उन्होंने घर के भीतर सिर्फ अपने कमरे मे बिताया था। इस अवधि मे ही तो घर का नौकर भी 'साहब' और 'मेम साहब' का चेहरा देखने को तरस गया था। हाँ दूसरा भाग अलबत्ता जो सिर्फ पाँच दिनो का था, वह उन्होंने कमरे से बाहर किंतु घर की चहार दिवारी में ही बिताया था। इस समय उनका और रजिनी जी का चेहरा देख पाने वाले दो जीव थे—एक तो उनका नौकर और दूसरे उनके परम भक्त कृष्णमाधव जी!

कृष्णमाधव जी नेक जीव थे। स्वभाव के बडे मृदुल थे। किसी के लिए काम आ जाना उनके लिए एक बान हो गई थी। कृष्णमाधव जी बनारस के पुराने रहने वाले थे। चूँकि वे पुराने जमाने से बनारस के रहने वाले थे इसलिए वे यह भी अच्छी तरह जानते थे कि किस गली मे कौन पान वाला पान मे कितना कत्था लगाता है और कितना चूना; किस गली में बढिया तम्बाकू मिलती है और किस गली मे अच्छी रौनक; किस गली मे कचौडी बढिया मिलती

है और किस गली मे सर्वपाचक हिगाष्टक चूर्ण––यह सभी बातें उन्हे इस तरह याद थी कि जैसे वे बनारस की चलती फिरती इनसाइक्लो पीडिया हों। जानकारी के इस अद्‌भुत गुण के बावजूद भी मनोविज्ञान मे वे गहरी रुचि रखते थे! बनारस का रहनेवाला चाहे डिगरियाँ न ले चुका हो मगर कला और सस्कृति तथा ज्ञान विज्ञान मे रुचि रखना उसके खून की तासीर मानी जाती है! इसी मनोविज्ञान के ही कारण कृष्णमाधव वकील साहब के घनिष्ट मित्र हो गए थे। नर मादा सबधी खोजों मे उन्हे भी दिलचस्पी हो चली थी। कृष्ण-माधव के लिए यह प्रसिद्ध था कि वे जिस पर द्रवित हो जायँ और जो उनकी नजरों मे चढ़ जाय उसके लिये वे संजीविनी बूटी लाने जाडे की एक बजे रात में भी जिस तेजी से जायँगे, उसके सामने हनुमान जी भी मात खा जायँ!

विवाह के एक हफ्ते के बाद, एक हफ्ते एक दिन तक तो अपनी हर कोशिशों के बावजूद भी कृष्णमाधव जी घर मे न घुस पाये और उन्हे बाहर ही बाहर लड्डू खाकर और कागज पर हस्ताक्षर करके ही संतोष करना पड़ा। लेकिन जैसे ही पहिला मौका मिला वे तत्काल घर मे दाखिल हो गए। उनके चिरंतन धैर्य और साहस ने यह दिन उन्हे दिखला कर छोड़ा कि वे अपना चोला मानव सेवा के हित अर्पण कर सके।

नई नई दूल्हन लाने के बाद बाजार हाट में घूमने की प्रायः जरूरत पडती रहती है इसीलिये कृष्णमाधव को घोरपडे जी ने खास तौर से अपनाया। कृष्णमाधव जी का चोला आगे कैसे विराटता के निर्माण मे लगा यह राज़ भी खुलेगा।

उस दिन छत पर वकील साहब अकेले थे। झुटपुटा हो

चुका था । कचहरी से लौट कर वे यूँ ही अकेले कुछ गुनगुनाते हुए टहल रहे थे। कही जाने के लिए श्रीमती सुब्बारंजिनी तैयार हो रही थी और उस बीच की प्रतीक्षा वकील साहब छत पर टहल कर बिता रहे थे। सहसा घर के सामने वाले पीपल पर उन्हे कुछ खड खड महसूस हुई। उन्हे भ्रम हुआ कि जैसे कोई छाया सी उतर रही है। वे डर के मारे पास पड़ी एक बॅसखट पर बैठ गए। उनके कानो में लगा कि उनकी आत्मा कुछ कह रही है। वे सुन रहे थे :

'रे मूढ ! तूने असंभव को संभव कर दिखाया ! ईश्वर के नियमों को तूने तोड़ डाला। जो बात कोई नही करता या कर पाता उसे तूने करके दिखाया, यह तूने अच्छा नही किया ।'

आत्मा की इस चीत्कार से वह डर गए ! पर वे मनोवैज्ञानिक भी थे। फौरन अपने मन की तहो को उधेड कर देखने लगे। अपनी प्रेयसी को दैवी चमत्कार से सभी उपन्यासों और सिनेमा कथाओं को झूठी साबित करती हुई मनोवैज्ञानिक वकील ने अपनी पत्नी के रूप में जब से पा लिया था तभी से उनके आत्मा के तार झनझना रहे थे !

वे आत्मा पर विश्वास करते थे मगर भूत चुडैल पर नही। घबडाए नहीं। हिम्मत बटोर कर उसी बॅसखट पर बैठे बैठे सोचने लगे कि जिस महान तत्व को पाने में असमर्थ जान कितने ही प्राणी दुराचारी, कवि और आत्मघाती हो जाते है, उस सहज-प्राप्त-संपदा को पाकर उन्हें तो अब कोई ऐसा काम करना चाहिए जिसमें उनकी आत्मा का निखार हो और वे मानवता की प्रगति मे एक मील के पत्थर गिने जायँ। घोरपड़े जी ने अपनी मनोविज्ञान की दिमागी थैली टटोली। उन्हें सहसा सूझा कि ऐसे संयोग पर एक ही काम किया जा सकता है और वह है—एक विराट व्यक्तित्व का निर्माण !

'अरे चलोगे भी कि बस ऊपर छत पर ही टहलने के लिये मुझे तैयार कराया है ?' कमरे से सुब्बारंजिनी की पुकार सुन कर वकील साहब चौक पड़े।

वे सोच रहे थे कि विराट व्यक्तित्व के निर्माण के लिये उन दोनों को तन मन धन से एक हो जाना पड़ेगा। ऐसा नही होगा तो कुछ नही हो सकता! विवाह होने के बाद वे तन और धन से बिल्कुल एक हो गए थे। अब रहा सहा मन भी वे एक कर डालने की बात सोचने लग गए थे।

'क्या सो गए? अरे मैं तैयार खड़ी हूँ! सुनते है आप?' दूसरी आवाज सुन कर वकील साहब नीचे उतरने लगे। इसी बीच उन्होने तै कर लिया वे अधिक से अधिक साथ रह कर अपने विराट व्यक्तित्व का निर्माण कर सकेंगे!

'वाह! आपको क्या हो गया? म कब से पुकार रही थी और आप है कि ऊपर जाकर सो गए!' सुब्बारंजिनी ने उलाहने देने शुरू किये।

'कुछ नही, कुछ नही! ऐसे ही कुछ सोचता रह गया। चलो पिक्चर चलेगे!'

दोनों तैयार होकर घर से बाहर निकल गए।

घोरपड़े ने रिक्शा किया। दोनों साथ साथ बैठे। आज उन्होंने रिक्शे का 'कवर' नही चढाया। खुले रिक्शे मे दोनों साथ-साथ चले। रास्ते में जितने भी वकील साहब के परिचित मिले, जिनसे उनकी सिर्फ एकाध बार की भी भेंट पहिचान थी, उनको भी वे रास्ते भर पुकार पुकार कर नमस्कार प्रणाम करते रहे। सिनेमा घर पहुँच कर दोनों ने टिकट लिया और साथ साथ जाकर बैठे। इंटरवल होने पर

आज घोरपडे उठकर भागे नही बल्कि जितने भी परिचित वहाँ बैठे दिखाई पड़े उन्हें घर घेर कर अपनी उपस्थिति की जानकारी कराई। घोरपड़े जी अब विराट व्यक्तित्व का निर्माण करना चाहते थे।

वैसे तो वकील साहब बैठे बैठे सिनेमा देखते रहे मगर उन्होने उसे देख कर भी नही देखा। वे बराबर यही सोचते रहे कि वे अपना मन किस तरह मिला सकते हैं। मनोविज्ञान का इतना अध्ययन करने के बावजूद भी यदि वे मन मिलाने में भी असमर्थ रहे तो यह सब कुछ अकारथ है!

दूसरे दिन उन्हे यह गुर हाथ लग गया कि यदि मन से विरोध करने की शक्ति एकदम हटा दी जाय, और प्रवृत्तियों पर संयम रक्खा जाय तो शायद मन मिल जाय। इसके लिये उन्होने अपनी 'मानसिक-ट्रेनिग' उस स्तर पर करना शुरू कर दिया जिससे उन्हे कोई क्लेश न उठाना पडे।

रंजिनी किसी काम के लिये कहती तो घोरपड़े जी तत्काल हुँकारी भर देते। मगर वे दरअस्ल स्थिति वह लाना चाहते थे कि एक के मन मे सिर्फ विचार मात्र आए तो दूसरा उसे व्यक्त कर दे। यदि घोरपड़े जी यह इशारा भी समझ जायँ कि रंजिनी अपनी सहेली कुमारी के घर जाना चाहती है तो वकील साहब कह पडें—

'बहुत दिनों से कुमारी का कोई हाल नहीं मिला। न हो तो आज उसी के घर हो आया जाय!'

इस तरह सोचने के लिये सबसे पहिली बात तो यह जरूरी थी कि अपने ऊपर हर तरह से जब्र किया जाय और अपने विचारों को उठने ही न दिया जाय।

सुब्बारंजिनी को बाजार जाना और अपनी गृहस्थी के लिये सामान

जुटाना बडा अच्छा लगता था। घोरपडे इस बात को जान गये थे। अक्सर जब वे कचहरी से लौटते तो वे खाली वक्त जान कर वे बाजार चलने का ही निमत्रण दिया करते थे। इसी अवसर पर कृष्णमाधव जी का 'नर चोला' भी सार्थक सिद्ध होता था। बाजार जाने का कार्यक्रम जिस दिन होता, उस दिन वकील साहब कृष्णमाधव जी को जरूर पकड लाते थे। क्योकि वे उनकी जानकारी के फ़न से अच्छी तरह वाकिफ थे। चूंकि वकील साहब जानते थे कि रंजिनी का मन बाजार जाने के लिये अक्सर उत्सुक रहता था इसलिये वे प्रायः यह भी बता दिया करते थे कि आज अमुक कारणों से बाजार चलना जरूरी है अन्यथा बडी हानि होने की संभावना है। बाजार में यदि कही पर रजिनी ठिठक कर खडी हो जाती तो घोरपडे जी का फर्ज होता कि वे उस दूकान की सारी चीजो का दाम, एक के बाद दूसरी, पूछते ही चले जायें। कृष्णमाधव जी भी जब साथ में होते तो 'मारकेटिग' मे कुछ अधिक रस मिलता। वे तो दूकान की हर एक चीज इस तरह उठा उठा कर इस युग्म को दिखाते गोया बनारस की हर दूकान उन्होने ही लगवाई हो!

रंजिनी को जब कोई चीज अच्छी लगी तो मन मिलानेवाले मनोवैज्ञानिक वकील का यह कर्तव्य होता था कि वह उसके आस पास की लगुवा भगुवा पूरक चीजें अपने आप खरीद डालें। एक बार जब रंजिनी ने किसी दूकान से बिनाई करने वाली बारह नम्बर की सलाई खरीदी तो वकील साहब ने मन मिलाने के लिये फोरप्लाई का एक पौड ऊन लिया और डिजाइनों की एक किताब भी खरीद ली ताकि श्रीमती रंजिनी उस ऊन के द्वारा डिजाइनों की किताब देख देख कर वह अपनी खरीदी हुई सलाइयों से उसकी प्रेक्टिस कर सकें! जब वकील साहब

की खरीदी हुई चीज से रंजिनी प्रसन्न होती तो वे निहाल हो उठते और अपने मनोविज्ञान को धन्यवाद देते !

घूमने का क्रम जारी रहा। रजिनी को साथ लेकर वे रोज शाम को दशाश्वमेध जाते; कीर्तनभजन सुनवाने से लेकर भरी चाँदनी रात मे नौका विहार करते; हर तरह से वे अपने व्यक्तित्व के कोने मार रहे थे !

इसी बीच एक दिन गृहस्थ चेतन रंजिनी ने घर मे मसाला चुक जाने पर वकील साहब से मसाला लाने को कहा !

'तो क्या सब कुछ चुक गया है ?' टालने की गरज से वकील घोरपड़े ने पूछा।

'नही, और कई चीजे तो है, लाल मिरचें खत्म हो गई है। डेढ पाव वही लेते आइए !' रंजिनी ने चतुर गृहणी की तरह कहा।

'डेढ़ पाव लाल मिरचें ?' आश्चर्य से मुह खोलते हुए घोरपडे बोले 'तुम जानती नही ! कैप्टन चारिया कहते है कि अधिक लाल मिरचें खाने से आदमी में स्त्री-सुलभ-पलायन-प्रवृत्ति जागती है ! उससे तो बचने की चेष्टा करना चाहिए ! समझी ?'

'कुछ नही समझी; जाइए चुपचाप मिरच लेकर आइए। खाना मै बनाती हूँ डाक्टर चारिया नही ! यह सब अपना मनोविज्ञान कागज के लिये रखिये, चूल्हे के लिये नही !'

यह टोन सुनकर वकील साहब का मनोविज्ञान हुर्र हो गया। चुपचाप उठे। कलेजे पर पत्थर रक्खा और चौके मे डेढ़ पाव लाल मिरचे ला रक्खी ! मन की विरोधी प्रवृत्तियों को वह सचमुच दबा देना चाहते थे !

विराट व्यक्तित्व के निर्माण का कार्यक्रम बराबर चलता रह'

बाहर से लौट कर आते तो घर मे भी वे अपने उत्तरदायित्व को निभाते रहते। घोरपड़े जी रंजिनी को समझा चुके थे कि दुनियाँ में मन ही एक ऐसी चीज होती है जो प्रायः सब कुछ मिल जाने के बावजूद भी नही मिल पाता है। इसलिये उन्हें अपने हर काम से सिर्फ मन मिलाने पर ही जोर देना चाहिए!

मन मिलाने के इस कार्यक्रम को दोनो ने इतवार के दिन शुरू किया।

गुलाबी जाडे के दिन थे। धूप बुरी नही लगती थी। हल्की धूप छाँह वाली जगह चुन कर दो कुर्सियाँ रक्खी गईं। सामने की एक तिपाई पर घोरपड़े जी ने कई किताबें ला रक्खी। रंजिनी दूसरी कुर्सी पर सामने आकर बैठ गईं।

घोरपडे ने कहा—

'जानती हो रंजिनी, हमारे मन के भीतर भी एक मन होता है। वही मन हमारा मालिक होता है। जो कुछ वह चाहता है वही हम करते है। बहुत सा ऐसा काम होता है जो हमारा ऊपरीमन नही चाहता लेकिन मन का मन चाहता है तो बस वह काम हम कर बैठते है!'

रंजिनी ने घोरपडे के हाथो मे खुली हुई किताब छीन कर बंद कर दी। फिर बोली—

'यह सब क्या है? भला मन का मन होता है कही? यह सब तो 'माइड' करता है!'

घोरपडे बोले—

'माइड?...नही 'माइंड' तो अलग चीज है। हमारे अंदर जो सवेग है, जो प्रेरणाएँ है, वह सब अलग चीजे है! हमारे अदर बहुत सी बाते सिर्फ आत्मा की पुकार पर हो उठती है! जड़ और

चेतन मे यही तो है । चेतन [illegible] आत्मा [illegible] ोती [illegible] जड़ की नही । यह सब जो रोज रोज दुनियाँ के लोग बदमाशी करते है और कचहरी दौड़ दौड कर जाते हैं, यह सब उनकी जड़ता है ! वे लोग अपने मन की बातो को ध्यान देकर नहीं सुनते ! मन की बात सुने तो आदमी जरूर सुधर जाय ?'

रंजिनी जो अब तक कुछ न समझती हुई गुटुर गुटुर सारी बातें सुन रही थी वह सहसा हँसकर बोल उठी :

'हाँ यह तो ठीक कहते हो। जब मै दिल्ली वाले अस्पताल में थी तो एक ऐसे रोगी से पाला पडा कि बस क्या कहूँ ? मै उसकी नर्स थी ! शायद वह सब तरफ से बडा निराश था। जिन्दा ही नहीं रहना चाहता था ! मैने उसको बडी हिम्मत बँधाई। तब उसकी यह फरमाइश हुई कि वह इसी शर्त पर अच्छा हो सकता है कि अच्छा होने के बाद वह मुझी से विवाह करेगा ! नर्स का कर्तव्य है कि रोगी का मन चगा रक्खे इसलिए मैने वादा कर दिया। जब वह अच्छा होने लगा तब उसका दिमाग खुद धीरे धीरे इतना सुधर गया कि उसने मुझसे फिर उस ढंग की कभी बात भी नही की।

घोरपड़े हँस पड़े—

'अच्छा फर्ज करो वह पीछे ही पड जाता तब तुम क्या करती ?'

'अरे ऐसे भी एकाध थे। यही बनारस में एकाध ऐसे रोगियो से भी भेंट हुई। उनको भी मैने अच्छा होने के लिये बहुत धीरज बँधाया था। तुम जानते होगे फ्लोरेस नाइटेगिल ने तो अपनी जिदगी ही रोगियों के लिये समर्पित कर दी थी। मै तो उसी को अपना गुरु मानती आई हूँ। इसीलिये रोगियों से हँस बोल कर बातें करना नर्स की ड्यूटी है ! मगर वे तो सचमुच पीछे पड़ गये। बड़ी मुश्किल

से डाक्टर चारिया ने उन्हें समझा बुझा कर वापस किया! तब से भई, ऐसे वादे मैने करना बंद कर दिया।'

'रजिनी के उत्तर के बाद घोरपड़े ने फिर पूछा—

'अच्छा तो क्या तुम्हे नर्सिग पूरी तरह से आती है ? पट्टी भी बाँध पाती हो कि नही ?'

रंजिनी 'ठहरो, अभी बताती हूँ।' कहती हुई उठ कर गई और अपनी 'नर्सिग-पेटिका' ले आई। उसमे से पट्टी बाँधने वाले 'स्कार्फ' निकाले। फिर उन्होने घोरपडे जी के हाथ, पाँव, मुह, सिर, आदि सभी अगो पर पट्टियाँ बाँध बाँध कर दिखाई और बताया कि अलग अलग ढग की पट्टियाँ क्यो बाँधी जाती है। किस तरह की पट्टी हर नर्स को बाँधना चाहिए जिसमे रोगी को हरकत करने की पूरी छूट रहे!

घोरपडे जी मंत्रमुग्ध सुनते रहे और पट्टियाँ बँधवाते रहे।

रजिनी उन्हें आगे बताती गई कि अस्पतालो मे सब नर्स टालू काम करती है। ठीक से टेम्परेचर लेना उन्हे नही आता। हरेक थर्मामीटर एक से नही होते। जाली थर्मामीटर और असली थर्मामीटर की क्या पहिचान होती है! डाक्टरो की और नर्सो की क्यों नही बनती!' टेम्परेचर-चार्ट' रखने का वास्तविक लाभ क्या होता है! रोगी के लिये दवा ज्यादा जरूरी है या उसकी नर्सिग ज्यादा लाभदायक हो सकती है, आदि सारी बाते रंजिनी ने उनको क्रमशः बतायीं।

अपनी पत्नी का यह सारा कौशल सुन कर घोरपड़े जी आत्म विभोर हो गये। उन्हे अपनी बीमारी और रंजिनी की सेवा याद आ गई। एकाएक भावावेश में उठे और उठकर उन्होने उसे अपनी बाहों मे भर लिया। थोड़ी देर तक वे बातें न करके सिर्फ प्रेम करते रहे।

प्रेम का यह इंटरवल उन्होने अपने कमरे मे आकर बिताया। कुछ देर बाद वे फिर अपनी मन मिलाने की प्रक्रिया दोहराने लगे। घोरपडे को सिनेमा की रंग-बिरगी पत्रपत्रिकाएँ पढने का जितना शौक था, उतना सिनेमा देखने का नही। बहुत सी सिनेमा वाली पत्रिकाएँ वे खरीद कर लाया करते थे। लेट कर दोनों ने सिनेमा की पत्रिकाओ के पन्ने पलटने शुरू किये। थोडी देर बाद ही वे रिमार्क करने लगे--

'आजकल हिन्दुस्तानी फिल्मो मे बडा 'चीप रोमास' दिखाया जाता है!'

'हाँ ऽ ऽ। लेकिन दुनियाँ मे आज कल यही तो हो रहा है। वही बेचारे क्या करें? उन्हे तो दुनियाँ की ही बात दिखानी पडती है। आखिर कोई बाहर से गढ कर तो लाते नही!'

'इधर सुरैया देवानंद की बहुत दिनों से कोई फिल्म नही देखी!'

'अब सुरैया क्या, अब तो नरगिस राजकपूर का जमाना है... यह देखो. .यह 'कलर काम्बीनेशन' देखो! क्या ग्रैण्ड है!! क्या बनारस ऐसा शहर है कि जहाँ 'कास्टली' साडी तो मिल जाती है लेकिन 'डीसेन्ट' चीजें नही मिलती। यह नई चीज है। पता नही यहाँ मिलेगी भी या नही!'

'छोडो भी, सांवले रंग पर बैंगनी कलर...? अच्छी चलाई!!'

'जाने भी दो ऐसा ही साँवला साँवला करना था तो ब्याह किस लिये किया था?'

'अरे तुम बुरा मान गई?'

घोरपड़े ने फिर उसे निकट खीच लिया। धीरे धीरे दोपहरी की खुमारी भरी नीद उनकी पलकों पर छा गई। दिन कुछ और

ढला। शाम के आसार दिखाई पडने लगे। पहिले रजिनी की नीद टूटी । उठ कर देखा नौकर चाय का पानी चढ़ाने के लिये चूल्हा सुलगा रहा था। रंजिनी अपने कमरे में चली गई।

वायोलिन-केस की धूल झाड कर उसमे से वायोलिन निकाला। 'बो' साफ की। फिर धीरे धीरे उसकी खूंटियाँ कसी। स्वर मिलाये और 'बो' चलने लगी। वायोलिन बजने लगा। उसके साथ वे गुन-गुनाने लगी। घोरपडे भी अपने कमरे मे पड़े पडे जाग चुके थे। वायोलिन की आवाज के साथ की गुनगुनाहट उनके कानो मे भी पडी। ध्यान लगा कर उन्होने सुना तो सुनाई पडा--

आओ बनाएँ घरवा प्यारा!

घोरपडे ने तकिए का सहारा लेकर कुछ सजग हो गीत सुनने के लिये कान खडे किये।

आगे आवाज आई--

हम और तुम और मुन्ना प्यारा
घरवा होगा स्वर्ग हमारा !!

बस फिर वकील साहब से नही रहा गया। तत्काल अपने कमरे से बिस्तर छोड़ रजिनी के कमरे मे पहुँचे। बगल मे बैठ कर आहिस्ता से पूछा--

'ये...ये...ये तुम क्या गा रही हो? मुन्ना प्यारा. ? छिः छि...यह तुमको किसने सिखाया?'

सुब्बारंजिनी शरमा कर चुप हो गई। सिर्फ एक शब्द मुह से निकला--

'क्यो?'

'क्यो क्या? 'मुन्ना प्यारा' आजकल 'घरवा' को 'स्वर्ग' नही

बनाता। वह तो हमारी 'फ्रीडम' को काट देगा! 'फाइनेंशियल क्राइसिस' ले आएगा! समस्याएँ खडी हो जायँगी!'

श्रीमती रजिनी बोली—

'छोडो भी! तुम्हे तो हर समय यही सूझता है! इसे छोड दूँ तो गाना ही टूट जायगा! गाना टूट जायगा तो गाऊँ क्या?'

इस बात पर तो वकील साहब ने सोचा भी नही था! रजिनी का गाना टूट जाय, इसके लिये तो वे किसी भी मूल्य पर तैयार नही थे। एक क्षण भौ सिकोडते ही उनकी मनोवैज्ञानिक बुद्धि ने उसका हल निकाल लिया। प्रसन्न होकर बोले—

'क्या लाइन है? पढना तो जरा...हम और तुम और मुन्ना प्यारा?' है ना? अब इस 'मुन्ना प्यारा' की जगह फिलहाल 'नौकर प्यारा' कर दो, काम बन जायगा। है ना? गाओ गाओ...अच्छा सुनें तो जरा?

रजिनी ने गाया—

'हम और तुम और फिलहाल नौकर प्यारा...'

घोरपडे बोल पड़े—

'अरे नही नही! इसमे फिलहाल लगाने का क्या काम है? 'फिलहाल' तो सिर्फ समझ लो! गाओ नही!! गाओ इतना—

'हम और तुम और नौकर प्यारा, घरवा होगा स्वर्ग हमारा!'

रजिनी गाने लगी। देखते देखते उस संगीत का ऐसा प्रभाव हुआ कि स्वयं वकील साहब भी झूम झूम कर वही गाना गाने लगे। जरा सी देर मे उनके घर मे 'कोरस' के रूप मे ये लाइनें गूंजने लगी—

हम और तुम और नौकर प्यारा
घरवा होगा स्वर्ग हमारा!!

तीन

सात महीने हँसते खेलते बीत गये । इतने दिनों के बीच वकील साहब और श्रीमती सुब्बारंजिनी घोरपडे ने एक ही बात साथ-साथ महसूस की। उन्हे लगा कि वे साथ-साथ सब जगह घूमते फिरते जरूर है लेकिन उसमे उन्हें पहिले जैसा मजा अब नहीं मिलता।

अब भी वे अपने मिलने वालों से हँस हँसकर बातें करते लेकिन वकील साहब को अब यह सब उबाने वाला शिष्टाचार मात्र लगता। कही किसी बात मे वह रस नही मिला जिसकी वह कल्पना कर रहे थे। रजिनी अब भी बाजार जाती, लेकिन घोरपड़े जी को अब दूकान पर जाकर इस तरह खडे रहना और फिर ऊन और सलाइयाँ खरीदना बहुत रोचक नही लगता था। बैठकर बेकार गप लड़ाने में भी उनका जी नही लगता? घर में खाली बैठने पर वही घर उन्हे काट खाने के लिए दौडने लगता! अब वे अपनी मनोविज्ञान की किताबें भी उलटते पलटते तो उन्हे चैन नही मिलता।

सुब्बारंजिनी का भी कमोबेश यही हाल हो गया था। जिन बातो मे उन्हें पहिले कुछ दिन बड़ा मजा आया था, वही मनोविज्ञान की बातें—मन का मन, मन के मन का मन, उपचेतन, अवचेतन, आदि—अब बडी वाहियात लगती थी । इधर जब वह वायोलिन बजाती तो न तो वकील साहब अपनी किताबें छोड़कर दौड़ आते और न उसके साथ स्वर मे स्वर मिलाकर गाते ही। घोरपड़े

अब रजिनी की पट्टियों और असली थर्मामीटरों के चक्कर में भी ज्यादा नही उलझते थे। बहुत दिनों से 'फर्स्ट एड' की किताबे और नर्सिग पेटिका बंद पड़ी हुई थी।

मनोवैज्ञानिक होने के नाते घोरपड़े जी सोच रहे थे कि उनके प्रेम को इस तरह भरी जवानी में लकवा क्यों मार गया? तभी उन्हे अपनी आत्मा की चीत्कार की याद आई। उसने कहा था—'रे मूढ! तूने असंभव को सभव कर दिखाया है! तूने ईश्वर के नियमों को तोड़ डाला है, यह अच्छा नही हुआ।' आत्मा मे वे विश्वास तो वे पहिले भी करते थे, लेकिन इधर इस तरह आत्मा की आवाज जो प्रतिफलित हुई थी, उससे उन्हे बडा आश्चर्य हुआ। अचेतन मन पर आत्मा की चीत्कार का प्रभाव उस आचरणवादी मनोवैज्ञानिक को साफ दिखाई पड रहा था।

दोनो व्यक्तित्वो को जिस तरह तन मन और धन से एक कर देने के बाद वह एक विराटता की कल्पना कर रहे थे, वह इस तरह हाथ नही आएगा, इसका विश्वास मनोवैज्ञानिक घोरपड़े को हो रहा था।

इस विश्वास के बावजूद भी घोरपड़े सुब्बारजिनी के साथ अपना कार्यक्रम चलाते रहे। वे चाहते थे कि वे अपने को एक दूसरे का पूरक बना दे मगर वे पूरक बनने के बजाय आपस मे टकरा जाया करते थे। घोरपड़े ने उस स्थिति का विश्लेषण करना शुरू किया। वकील साहब ने देखा कि जो पुलकन और रोमाच छिप छिपकर मिलने मे मिलता था, वह आनंद अब इस तरह खुले आम घूमने मे नही आता। उन्हे याद पड़ता कि जो मजा अपनी प्रेयसी के साथ अँधेरे सिनेमाहाल मे बैठने मे है, वह अपनी पत्नी के साथ चमकते प्रकाश

में उसी जगह बैठकर कभी नही मिल पाता। शाम को शीर्श के सामने सीटी बजाते हुए खडे होकर बाल काढते समय अपनी 'हनीडच्यू' से मिलने की जो सिहरन मन मे रहती है वह प्रेयसी को पत्नी रूप मे परिवर्तित हो जाने पर साथ-साथ एक ही ताँगे में बैठकर आने जाने में नही है। जब लोग यह जान जाते है कि अमुक आदमी को अमुक के साथ घूमने फिरने का अधिकार है तो फिर किसी को उनमे जिज्ञासा नही रहती। चार परिचितो को काटते हुए, उनकी आँख बचा कर निकलते हुए---या पकडे जाने पर बीमार चाचा को देखने जाने का बहाना बता कर---उड कर अपनी 'डारलिंग' का अँधेरी सडक पर हाथ पकड कर घूमने मे जो लुत्फ मिलता है, वह रोज बीस आदमियो के सामने हाथ जोड कर अपनी उसी पत्नी का बार बार परिचय देने मे कभी नही मिलता।

सुव्वारजिनी भी इतनी जल्दी प्रेम की क्षणभगुरता सिद्ध होते देख बड़ी चिंतित थी। वह समझती थी कि उनके हाथ से कोई चीज आहिस्ता आहिस्ता खिसक रही है मगर वे उसे खिसकने से रोक नही पा रही थी। खुद अपनी उदासी का कारण भी उन्हे समझ मे नही आता था।

घोरपडे जी चूँकि सोचते ज्यादा थे इसलिए उनकी मनोदशा ज्यादा बिगड़ रही थी। अक्सर उनके दिमाग मे यह ख्याल चक्कर काटता कि उन्हे अपनी प्रेयसी से विवाह नही करना चाहिए! आखिर जब भगवान् ने प्रेयसी और पत्नी नाम की दो चीजे बनाई है तो मैने उन दोनो चीजों को मिला कर जो एक कर डाला है, उसका फल तो भोगना ही पडेगा!

कई दिन बाद उस रोज गजानन चौधरी फिर वकील साहब के

यहाँ आए। उनके मकान मालिक ने उनको मकान खाली करने की नोटिस दे दी थी। गजानन चौधरी इससे बहुत परेशान थे। घोरपडे के यहाँ से जब से वे बुरा मान कर गए थे तब से वे नही आए थे। मगर इस मुए मकान मालिक ने आखिरकार नोटिस देकर उन्हे अपने वकील दोस्त की शरण जाने पर मजबूर कर दिया। घोरपडे ने उनकी मुसीबत सुनी। उन्हे सलाह दी और बताया कि किस तरह मकान मालिक उनका न तो कुछ बिगाड सकता है और न उन्हें घर मे ही बाहर ही निकाल सकता है !

गजानन चौधरी यह सुनकर बहुत पुलकित हुए। फौरन घोरपड़े से पूछने लगे--

'और कहो यार! क्या हाल चाल है? इधर आ ही नहीं पाया! कैसी कट रही है भाभी जी के साथ?'

घोरपडे जी के मन का घाव छू गया। अब तक अपनी दिमागी उलझन उन्होंने किसी से नही कही थी। आज गजानन चौधरी को इस तरह पूछते देख वे फूट पडे--

'यार क्या बताऊँ! कुछ समझ में नही आता! ऐसा लगता है कि जैसे मैने सिर्फ कवर देखकर किताब खरीद ली!'

कहते कहते उन्होने गहरी साँस भरी।

गजानन चौधरी भी बहुत द्रवित हुए। बोले--

'अब जब किताब खरीद ली है तो मित्र! आँख बंद करके पढ जाओ! चार आदमियो से कहते रहोगे तो यह तो दुनियाँ है! उल्टा तुम्ही को बुद्धू बनाएगी! भला कौन तुम्हारा कहना मानेगा? तुम तो भई, समझदार आदमी हो, कोई ऐसी तरकीब लडाओ कि जिससे कि निभ जाय! ऐसा भी क्या! पुराने वक्त के लोग तो जिस लड़की

का हाथ पकड़ लेते थे, उसकी जिन्दगी निभा देते थे। फिर तुम तो पढे लिखे आदमी हो! बहुत सी बातें तो तुम मनोविज्ञान से ही हल कर सकते हो!'

गजानन चौधरी उनको यह समझा बुझा कर और अपने मकान मालिक से लड़ने के लिये कमर कसते हुए चल दिये। घोरपडे जी बाते समझ लेते थे। दोस्त की सलाह भी समझ ली!

वक्त पाकर एक दिन उन्होंने सुब्बारजिनी से अपने वैवाहिक जीवन के रोमांटिक टाइम टेबुल के प्रति ऊब की भावना व्यक्त की। उसके मन मे भी यह काँटे की तरह खटक रहा था। रजिनी ने भी उनकी बातों की पुष्टि की।

अंततोगत्वा उन दोनों ने अपने वैवाहिक जीवन में रोमास तत्व के क्रमिक ह्रास पर विचार विनिमय करने के लिए आपस में एक गोष्ठी करना तै किया।

०

चार

पहरेदारो की लम्बी लम्बी तेज़ सीटियो से रात का सन्नाटा बार बार टूट जाता था। एक सीटी और दूसरी सीटी के बीच का सन्नाटा और भी डरावना हो उठता था। लगता था कि आस पास कही कोई खतरा जरूर है! जो भी इन्हे रात मे एक बार सुन लेता था, वह सहम उठता था--सिवाय उनके जिनसे बचने के लिये, ये सीटियाँ बजाई जाती थी! उन्हे तो यह पूरा विश्वास रहता ही है कि हिस्सा पूरा मिल जाने पर सीटियाँ वहां हरगिज नही सुनाई पडेगी जहाँ वे जम कर अपना काम कर रहे होंगे।

एडवोकेट दामोदर विष्णु घोरपडे के ऊपर वाले कमरे मे हल्की नीली रोशनी जल रही थी जो कि रोशनदान से छन छन कर सडक के एक किनारे तिरछी होकर पड रही थी। कमरे का सिर्फ एक दरवाजा खुला हुआ था जिसमे से होकर आती हुई हवा, कमरे के हल्के नीले रग के पर्दो को धीरे-धीरे हिला देती थी। एक किनारे पर रक्खी हुई धूपदानी से उठती हुई सुगध ने कमरे को गमका रक्खा था। कमरे के बीचो बीच एक मेज थी। मेज के किनारे बेंत के छोटे-छोटे चार मोढे थे। दो मोढो पर आमने सामने दो व्यक्ति बैठे हुए थे। एक थे वकील साहब और दूसरी थी श्रीमती सुब्बारजिनी। कॉफी की भरी हुई केटली रक्खी थो। सामने प्यालो मे भी वह भरी हुई थी। जले हुए सिगरेट के टुकडों से वकील साहब के सामने रक्खा हुआ 'ऐश ट्रे'

एकदम भर गया था। दोनो के चेहरो पर एक अजीब सी चिता व्याप्त थी । शायद कोई अखबार का आदमी उन्हे देख पाता तो यही समझता कि वे यही सोच रहे होगे कि युद्ध मे 'एटम बम' छोडा जाय या न छोड़ा जाय! बात भी कुछ कुछ ऐसी ही थी। स्पष्ट ही वे अपने ह्रासोन्मुख रोमास पर चिता प्रकट कर रहे थे ।

'खैर कुछ भी कहो । मन माफिक करने के लिये मैने अपने पर कितना जब्र किया है, यह आसानी से किसी दूसरे को समझाना मेरे लिये कठिन है। अपने मन को उस ढंग से रख कर देखिए तो पता चलेगा कि कौन क्या करता है? ... क्या कहूँ मेरी आत्मा की बात...

'तुम फिर वही आत्मा परमात्मा की बातें लेकर बैठ गए। मै कहती हूँ कि क्या हम लोगों की अपनी अक्ल कही गुम हो गई है जो आप आत्मा परमात्मा का सहारा ढूंड ढूंढ कर लाते है! मै अपनी जिम्मेदारी अच्छी तरह समझती हूँ। लेकिन मै कर भी क्या सकती हूँ? कहो तो गिरिस्थी चलाऊँ और कहो तो दिन भर बैठ कर प्रेम करूँ? दोनों बाते सग सग आज तक मैने तो नही सुना।'

'वाह अभी हमारे बार-एसोसियेशन के एक दोस्त रमेश मुकर्जी की 'लव-मैरिज' हुई है। दोनो बड़ी शान से रहते है। मिसेज मुकर्जी घर भी सम्हालती है और रोमांस भी करती है! यह तो नही होता कि घर के इस्तेमाल के लिये मुकर्जी ने कोई दूसरी रख छोडी हो और बाहर उनको लेकर घूमते हों!' नई सिगरेट जलाते हुए घोरपडे बोले।

उठते हुए धुयें को अपनी आँखों मे लगने से बचाने के लिये श्रीमती ने अपने हाथो से उसे दूसरी तरफ मोडने की कोशिश करते हुए कहा--

'होगा। दुनियाँ भर की मिसालें ले लेकर अगर हम अपना जीवन गढ़ने चलेंगे तो न इधर के रहेंगे न उधर के । हमें तो सारी बातें छोड़ कर यह सोचना है कि हम अपने रोमास को किस तरह पुनर्जीवित कर सकते है! इस तरह की बहस से तो हम उसे स्मशान-घाट की ही तरफ ले जायँगे?'

सहसा बात काट कर वकील साहब बोल पड़े--

'तो क्या मैं श्मशान घाट का रास्ता बता रहा हूँ?

बात बिगड जाने के डर से रंजिनी ने अब शान्ति पूर्ण सह-अस्तित्व का सहारा लिया--

'नही। मेरा यह मतलब नही था। किन्तु मैं यह कह रही थी कि हम लोग जिस तरह की बाते कर रहे है उससे बात बढने के अलावा और कोई नतीजा नही है। इसी से कहती हूँ कि अब कुछ ऐसा सोचिये जिससे बात बन जाये, बिगड़े नही। आप तो मनोविज्ञान के पंडित है। आप चाहे तो जरूर कोई ऐसा रास्ता निकाल सकते है जिससे यह संकट दूर हो जाये। आखिर हम लोगो के व्यवहार में तो कोई भेद नही आया है, सिर्फ मन का ही फर्क है जिसे आप चाहें तो क्षणभर मे किसी तरकीब से दुरुस्त कर सकते है।'

आज पहली बार वकील साहब के मनोविज्ञान शास्त्र की प्रशसा रंजिनी ने की थी। न सिर्फ प्रशंसा ही की थी वरन् उसने उसकी उपयोगिता भी मानी थी। घोरपड़े का अहम् संतुष्ट हो गया। अपनी विजय पर वे मुस्कुरा उठे। फिर सिगरेट का एक कश खीच कर बोले--

'तो इस तरह कहो ना! मैं तो पहुत पहिले से ही कह रहा हूँ रजन! (वकील साहब पर जब प्यार का दौरा आता था तब वे

सुब्बारजिनी को यही कहते थे) बिना मनोविज्ञान के हमारी समस्याएँ नही हल हो सकती। तुमने अब उसका सहारा लिया है तो वह हमारी नैया भँवर के पार लगा देगा।'

घोरपडे जी मौन हो गये। उसके बाद सिगरेट के धुएँ के गोल गोल छल्ले उडाते हुए वे कुछ सोचने लगे। तारो भरी काली रात मे जिस तरह कभी कभी हवाई जहाज की रोशनी उड़ती सी दिखाई देती है और लुप्त हो जाती है, उसी तरह से घोरपड़े की आँखों के सामने आशा की किरन दिखाई पड कर लुप्त हो जाती थी। लेकिन जिस तरह हवाई जहाज की घर्र घर्र आवाज दिखाई न पडने पर भी आसमान मे उसका अस्तित्व साबित करती रहती है, उसी तरह आशा की यह लुका छिपी उनके दिमाग में भनभना रही थी। उन्हे विश्वास था कि वे शीघ्र ही उसे पकड लेगे। कुछ आवाज में भी षडज का पुट देते हुए बोले—

'जिस तरह हमने प्रेयसी प्रियतम को एक ही चुटकी मे पति पत्नी बनाकर समाज के अक्षय सिद्धान्त को नष्ट किया है, उसी तरह हमे इस दिशा मे भी सशक्त कदम उठाना पड़ेगा। सुनो रजन! हमे यह भूल जाना पडेगा कि हम और तुम पति पत्नी है।'

सुब्बारजिनी इस तरह चौक पडी जैसे उसे जलती हुई सिगरेट छू गई हो। बोली—

'भला यह कैसे हो सकता है कि हम यह रिश्ता भूल जाये? भूलना इतना आसान है क्या?'

'हाँ। भूलने की क्रिया को भी इसी तरह आसान बनाना होगा। यदि हम किसी भी चीज को प्रयत्न करके याद कर सकते है तो उसे प्रयत्न करके भूल भी सकते है। गीतों की बात जाने दो जिनमें

'याद भुलाई जा न सकेगी' गाया जाता है, लेकिन याद भुलाई जा सकती है। जिस तरह से हमने एक दूसरे को प्यार करने के पहले अपने दिमाग को प्यार ग्रहण करने के लिये तैयार किया था उसी तरह एक बार उसी मानसिक-अनुशासन को अपने ऊपर फिर लगाना होगा। उसी से हम अपने उद्देश्य की प्राप्ति कर सकेंगे। हमें फिर वही सब क्रियाये दुहरानी पड़ेगी ताकि हमारा रोमास जीवित रह सके। इसके लिये तुम्हे फिर से 'मिस' सुब्बारजिनी बनना होगा और मुझे मात्र दामोदर घोरपडे।'

श्रीमती रजिनी मनोविज्ञानी वकील की इस अद्‌भुत दिमागी कलाबाजी को आश्चर्य चकित होकर देख सुन रही थी। उसे अपने कानों पर यकीन नही आ रहा था। सहसा उसके मुह से निकल पडा--

'आखिर इस सब नाटक का लाभ क्या होगा?'

'लाभ वही होगा जिसके लिये आज हमने अपने चार घण्टे बर-बाद किए हैं। हमे अपने रोमास को जीवनदान करना होगा। यही इसका लाभ होगा? तुम तो जानती हो, जिस तरह किसी रोग को दूर करने के लिए उसी रोग के कीटाणुओ का इंजेक्शन लगाया जाता है, उसी तरह अपने रोमास को गरमाने के लिए हमे भी रोमास के ही इजेक्शन लगाने पड़ेंगे! रजन! इससे न सिर्फ हमारा जीवन ही सुखमय होगा वरन् हम ससार के कितने ही दुखी दम्पतियो को यह रास्ता दिखा सकेंगे कि वे फिर किस तरह अपना जीवन सुखी बना सकते हैं!'

नई सिगरेट जलाकर वकील साहब कमरे मे टहलने लगे। रजिनी को मौन श्रोता पाकर वे उत्साह में आ गए--

'न सिर्फ यह तुम्हारा कल्याण करेगा बल्कि यह तो मनोविज्ञान शास्त्र में दामोदर घोरपड़े की नई देन होगी। मैं यह बता सकूँगा कि एक बार याद की हुई चीज को किस तरह भुला कर सुख का द्वार ढूंढा जा सकता है। संसार की कितनी रोमांटिक ट्रेजेडी' बच जायँगी। वे सब मेरा नाम ले ले कर मुझे धन्यवाद देंगे। रंजिनी! आज तक जिस चीज के लिये मैं परेशान था, वह आखिर कार मेरे हाथ लग ही गई। तजुरबा पूरा करने के बाद जिस वक्त मैं दुनियाँ के सामने इस बात को रक्खूँगा तो एकदम तहलका मच जायगा। सारे मनोविज्ञान-अध्येयता चक्कर में पड जायँगे जब मैं इसे अपने ही ऊपर प्रमाणित करके दिखा दूँगा! मैं इसी मनोविज्ञान का आधार लेकर अपनी वकालत भी चमकाऊँगा!'

रजिनी के मुख पर अब भी अविश्वास की छाया थी। घोरपडे ने इसे तत्काल देख लिया। अबकी रंजिनी को उन्होने अधिक वैयक्तिक स्तर पर समझाया--

'तुम चिता न करो रंजन! समय पाकर सब ठीक हो जायगा। घबराने की कोई बात नहीं। तुम्हे मात्र अपना दृष्टिकोण बदलना है और कुछ नहीं। दृष्टिकोण के बदलते हो सब ठीक हो जायगा। तुम पाओगी कि तुम प्यार करने के लिये और मुझसे मिलने के लिये फिर उसी तरह से परेशान हो, जैसे पहिले रहा करती थीं। सिर्फ नजर बदल डालो। अपने पति घोरपड़े को भूल जाओ। सिर्फ दामोदर को याद रक्खो—वही दामोदर, जो तुमसे सिनेमाघर के अँधेरे में मिला करता था, वही दामोदर जो अस्पताल मे तुम्हारी सेवा से चंगा हुआ था! तुम्हे अपने दिमाग को यह रास्ता दिखाने के लिये कुछ कठिनाइयाँ जरूर पड़ेंगी। उसके लिये सबसे सरल तरकीब यह

है कि तुम कुछ मस्ती किस्म की पत्रिकाएँ और किताबें पढ़ डालो। कुछ ऐसे उपन्यास और कविता की किताबें आसानी से मिल जायँगी जिनको पढ कर तुम्हारा मन उसी तरह रहने और काम करने के लिये मजबूर हो जायगा। माँग जाँच कर या खरीद कर मै तुम्हे ऐसी सारी किताबे ला दूंगा। फिक्र न करो। उसका असर अपने आप होगा । बस तुम्हे उसी लगन के साथ पढ़ना पडेगा जिस तरह लडकियाँ स्कूल मे अपनी किताबो के नीचे उन्हें रख कर मगन हो, रस ले लेकर पढ़ती है। कुछ दिनों इस तरह करने पर तुम देखोगी कि तुम में एक कितना बडा परिवर्तन आ गया है।'

सुब्बारंजिनी का दिमाग जैसे जम गया था। कुछ समझ मे नही आ रहा था। घोरपड़े के दिमाग का चक्कर देखकर उसे खुद चक्कर आने लगा था।

वकील होने के कारण, दामोदर घोरपड़े को अपनी बात जबर्दस्ती मनवा लेने मे कोई खास दिक्कत नही महसूस हुई। अक्सर कचहरी मे इससे ज्यादा कूढ-मग्ज लोगों को अपनी बात समझा कर वे अपनी धाक जमा चुके थे! यहाँ तो वे 'प्रेम मात्र' मूल्य पर अपना तर्क दिए जा रहे थे। आखिरकार सुब्बारंजिनी को यह विश्वास कर लेना पड़ा कि वे किसी तरह अपने चारों तरफ का वातावरण भूल कर, फिर उसी भूत काल के गर्भ में डूब जायँ जहाँ से वे किसी तरह बाहर निकली थी। घोरपडे ने रंजिनी को यह भी विश्वास दिला दिया कि वे इस प्रकार सारी दुखी मानवता का कल्याण करेगी और फ्लोरेंस नाइटिंगेल की आत्मा उन्हें आशीष देगी! प्रेम विवाह से संतप्त लोगो के निवारणार्थ रंजिनी ने इस तजुरबे में अपना योग देना स्वीकार कर लिया।

घोरपडे ने इस कार्यक्रम को प्रारंभ करने के लिये वही पुरानी
ागह—यानी 'सुभद्रा देवी धर्मार्थ अस्पताल'—का नाम प्रस्तावित
कया। उनका कहना था कि वही से हमारा प्रेम शुरू हुआ था,
सलिये अब वही से दुबारा शुरू करना चाहिए!

सुब्बारंजिनी ने सुझाया—

'आप तो जानते हैं कैप्टन चारिया को अगर यह सब पता चला
ो कितना तमाशा बनेगा! वे समझेंगे कि हमारा दिमाग खराब
ो गया है और विटामिन 'डी' की गोलियाँ और हरे छिल्कों
रकारी का कार्यक्रम हमारे ऊपर शुरू कर देंगे। मिसेज हरनाम
राने ख्यालात की है। वे कभी भी इसे पसद नही कर सकती!
नकी नजरों में आप गिर जायेंगे!'

वकील साहब नजरो मे नही गिरना चाहते थे। बोले—

'अच्छा न सही अस्पताल! अस्पताल के कम्पाउण्ड में तो उन्हे
कसी तरह की आपत्ति नही हो सकती! आखिर अस्पताल के कम्पा-
ण्ड में तो और भी कई लोग रहते हैं। बात यह है कि जब तक
राना 'एसोसिएशन' नही मिलेगा तब तक हमारे 'रोमास' मे 'लाइफ'
ही आ सकती! रात के होने के बाद अगर हम उस कम्पाउण्ड का
स्तेमाल करें तो.......'

'कैप्टन चारिया नाराज होगे! वे कहते थे कि इस तरह नर्सों
ो खुली छूट देने से अस्पताल की आबरू पर बट्टा लगता है!'

'हाँ हाँ...लेकिन रात मे कौन क्या जाने? फिर अब तुम उस
स्पताल मे नर्स भी नही हो! मियाँ बीबी अगर राजी हों तो
जी साहब को क्या पड़ी है कि वे धमा चौकड़ी मचाएँ?'

रंजिनी चुप रह गई। मौन से उसने स्वीकृति दे दी। सोच लिया

कि जब नाटक होना ही है तो फिर पर्दा किस सीन से उठता है, इस बात को लेकर क्या झगड़ा किया जाय!!

धीरे धीरे दोनो ने भूलने की क्रिया का अभ्यास करना शुरू किया। एक घर में रहते हुए भी वे समझते कि वे दोनो किराएदार हैं जो एक ही होटल मे रह रहे हैं। रंजिनी को 'प्रेमपथ' पर अग्रसर कराने के लिये सस्ती किस्म की कुछ उद्दीपन सामग्री की आवश्यकता थी। घोरपडे उसको पहुँचाते रहे। इस मामले मे, जैसा कि वकील साहब का ख्याल था, सचमुच हिंदी की अनेक पत्र पत्रिकाओ और उपन्यासो ने घोरपड़े की समुचित सहायता की। जो चीज वे शायद समझा कर बरसों में भी सफल न हो पाते, वे सब अपने आप घटित होने लगी। सप्ताह के चार दिन चुन चुन कर रद्दी हिन्दुस्तानी फिल्मे देखने के लिये तै कर दिये गए। इससे न सिर्फ मनोरंजन होता था बल्कि उससे पाठ्यक्रम मे काफी सहायता मिलती थी।

मनोविज्ञान—शास्त्री घोरपडे ने सोचा कि मानसिक अनुशासन के साथ साथ शारीरिक अनुशासन की भी बहुत बड़ी जरूरत है। जिस तजुरबे को लेकर वे अपना नाम कमाने जा रहे थे उसके लिये घोर तपस्या की आवश्यकता थी। और तपस्या के लिये त्याग भी जरूरी था!

रात का दूसरा पहर शुरू होने वाला था। 'सुभद्रा देवी धर्मार्थ अस्पताल' के पिछवाड़े वाले छोटे फाटक के सामने एक रिक्शा रुका। पिछवाड़े का हिस्सा काफी सुनसान पड़ता था। नीबू और नारंगियो के कुछ पेड लगे हुए थे जो अब अधसूखे हो रहे थे। थोड़ी दूर पर अस्पताल में काम करने वाले जमादारों और दाइयों के क्वार्टर थे। रिक्शे

में से घोरपडे और 'मिस' सुब्बारंजिनी उतरे—(हाँ, अब वकील साहब उन्हें दुबारा 'मिस रंजिनी' ही कह कर पुकारने लगे थे!)। रंजिनी उतर कर आगे बढ़ीं। छोटा फाटक खोल कर वे भीतर घुस गईं। कुछ देर आगे बढ कर उन्होंने नीबू की एक सूखी सी डाल पकड़ ली। उसके बाद उन्होने उसी डाल को पकड़े पकड़े गुनगुनाना शुरू किया। 'कुज कुटीरे' के इस प्रेमालाप में जिस तरह नायक का पीछे से आना निश्चित रहता है ठीक उसी तरह दबे पॉव फिर वकील साहब आए। आकर उन्होंने रंजिनी की आँख अपनी गदेलियों से बंद कर दी।

रंजिनी घबड़ा उठी। 'कौन है?' कह कर उसने हाथ हटाया तो उन्हे देखा। फिर बोली—

'अजी छोड़ो। तुम बड़े वो हो! यह क्या है?' यद्यपि रंजिनी इस पूर्वनिश्चित कार्यक्रम को जानती थी किंतु फिर भी पाठ्यक्रम के हिसाब से उसे यह कहना पड़ता था। घोरपडे ने उसकी कनपटी पर उड़ कर आ गई बालो की एक लट को जरा सा हटा कर एक गरम गरम चुम्मी जड़ दी! हालाँकि अँधेरे मे कुछ भी दिखाई नही पड रहा था लेकिन वकील साहब चूँकि पहिले ही से यह जानते थे कि चुम्मी की प्रतिक्रिया पाठ्यक्रम के अनुसार क्या होनी चाहिये इसलिए वे जान गये कि रजिनी का गाल लज्जा से लाल पड गया!

रंजिनी ने कहा—

'तुम बड़े खराब हो जी दामोदर! अगर कोई देख लेगा तो क्या कहेगा?

दामोदर ने जवाब दिया—

'देख लेगा तो क्या कहेगा? प्यार कर रहे है! आखिर बुरा क्या कर रहे है?'

'छोड़ो भी!' सहसा एक जोरो की खखार की आवाज सुनकर दोनो चौक पडे। वकील साहब फौरन पीछे की तरफ भागे और फाटक के बाहर निकल गए। रजिनी ने देखा कि अस्पताल का एक जमादार उधर से आ रहा था। वह रजिनी को अच्छी तरह पहिचानता था। छूटते ही बोला—

'बिटिया! इस बखत यहाँ कैसे? वकील साहब कहाँ है?'

पुराना जमादार होने के कारण वह रजिनी को 'बिटिया' ही कहता था। रजिनी को पसीना आ गया। घबडा कर बोली—

'कही नही! ऐसे ही काम से आई थी!...अब जा रही हूँ।'

जमादार बुड्ढा खुर्राट था। ऐसे नही मानने वाला था। कहने लगा—

'नही बिटिया! ऐसे मे अकेले घूमना फिरना ठीक नही है! चलो तुम्हे डागडर साहब के घर कर आऊँ!'

'नही नही मै चली जाऊँगी! तुम फिक्र न करो। जाओ सोओ!' कहती हुई रजिनी किसी तरह अपने लड़खड़ाते हुए कदमो को सम्हाल हुए फाटक की ओर तेजी से बढी और निकल गई।

बुड्ढा जमादार कुछ देर सोचता हुआ खडा रहा फिर आगे चला गया!

दामोदर बाहर मिले! रजिनी को उन्होने ढाढस दिलाया और बताया कि रोमास में ऐसे अवसर प्राय: आते ही रहते है। अगर न आएँ तो फिर वह कच्चा रोमास होता है! अस्पताल के पास से ही एक नाला बहता था जिसमे से होकर सारी गदगी गंगा मे जाकर मिलती थी। नाले के इस ओर एकदम उजाड़ था। बस्ती उस पार से शुरू हुई थी। 'कुज कुटीरे' से निकल कर यह युग्म इस 'यमुना तीरे' पहुँचा!

नाले पर एक छोटा सा लकडी के तख्तो का पुल था। पुल के किनारे एक बिजली का खम्भा था जिसमे बार बार बल्ब लगाया जाता था लेकिन हर बार प्रेमी प्रेमिकाओ का दल उसे तोड कर पुल पर अँधेरा कर देता था। यह पुल कई जोडो के प्यार करने का केन्द्र था, यह दामोदर जानते थे।

रंजिनी को जैसा सिखाया गया था, उसके अनुसार वह आगे बढी और बिजली के खम्भे का सहारा लेकर खडी हो गईं। फिर वे गाने लगी--

तीर खाते जायँगे, आँसू बहाते जायँगे !
जिन्दगी भर अपनी किस्मत आजमाते जायँगे !!

घोरपडे चुपके से पुल पर चले गए ! एक तरफ की रेलिंग पकड कर उन्होने भी वही गाना शुरू कर दिया ! अपनी तरफ से भी वही गाना गाकर उसे वे 'दुगाना' कह कर सतोष कर लेते थे ! गहरी गहरी उसाँसो और भोडे स्वर मे गाने का कार्यक्रम काफी देर तक चलता रहा। पास के घडियाल ने दो बजाये। रजिनी चौक उठीं।

'घर नही चलना है क्या ? बहुत देर हो गई !'

'घर ? ...अच्छा चलो !'

दोनो घर लौट गए।

मानसिक अनुशासन की यह प्रारभिक शिक्षा तीन सप्ताह में पूरी हो गई। वे अब मियाँ बीवी का रूप भूलने में काफी देर तक समर्थ रहते थे। इसीलिये दामोदर घोरपडे अब उसे एक निश्चित कार्यक्रम के ढग पर चलाना चाहते थे और उसकी निश्चित प्रतिक्रिया देखना चाहते थे ! इन सब मे सबसे बडा बाधक उनका घर

था! घर का वातावरण, उसकी चहार दीवारी, उसका आँगन, उसके कमरे सब चिल्ला चिल्ला कर पुकारते थे कि वे एक शरीफ गृहस्थ हैं—वकील साहब पति हैं और श्रीमती रंजिनी एक भारतीय पत्नी है!! घर की दीवारें पुरखों की परम्परा की दोहाई देती थी। वे होटलों की तरह प्रेमी प्रेमिकाओं के नवीनतम प्रकरण—नहीं सुना पाती थी। इसीलिये घोरपड़े घर को अपनी योजना में एक बाधा समझते थे!

उन्होंने अपने कार्यक्रम का स्वरूप अब कुछ बदला था। अब दोनों अपने कार्यक्रमों के बारे में एक दूसरे को कुछ भी नही बताते थे। बताते भी थे तो गलत बताते थे! साथ साथ तैयार होकर जब वे चाय की मेज पर बैठते तो बिना निगाहे उठाए हुए एक कहती—

'मैं आज कमलिनी के घर जा रही हूँ। जरा देर से लौटूंगी। उसके बच्चे की 'बर्थ डे' है! काफी लोग रहेगे। जरा देर से ही लौटूंगी।'

'ठीक है! मुझे भी कुछ मित्रों ने 'पिक्चर' के लिये बुलाया है। नयी नौकरी मिली है, उसी सिलसिले में कुछ दावत वगैरह की है। हो सकता है मुझे भी काफी देर लगे!' दूसरा उत्तर मे कहता।

अब उनके पास इस तरह के अनेक 'बर्थ डे', मूँडन, विवाह, डिनर-पार्टी, पिकनिक, ज्वॉयपार्टी और पिक्चर के कार्यक्रम रहते। हर शाम इनमें से एक वे चुन लेते और चाय पीते समय उसकी घोषणा कर देते! कहीं दोनों के कार्यक्रम अकस्मात् मिल न जायँ, इसके लिये वकीलबुद्धि घोरपड़े ने साप्ताहिक ढंग पर कार्यक्रमों की दो सूचियाँ बना डाली थी। एक रजिनी के पास रहती थी और दूसरी खुद उनके पास। सोम, मंगल, बुध, बृहस्पत, शुक्र, शनि और रविवार के हिसाब

से दोनो अपने अपने कार्यक्रम बताते थे। इस प्रकार किसी संयोग की सभावना नही रहती थी। इसमे सिर्फ इतनी सी अक्लमंदी अपेक्षित थी किरंजिनी जब भी अपना कार्यक्रम बताती तो इस बात का ध्यान रखती कि उन्होने अपनी किस महिला सखी का नाम लिया है। उसी तरह घोरपडे भी अपने मित्र का नाम याद रखते! नाम न याद रखने पर यह संभव हो सकता था कि यदि मिसेज दास के यहाँ पिछले सप्ताह 'बर्थ डे' थी, तो कही भूल मे फिर अगले सप्ताह उन्ही के यहाँ 'बर्थ डे' न हो जाय! (सब कुछ जानते हुए भी—) इस तरह की भद्दी भूलों से ख्वामखाह पति पत्नी के बीच मे संदेह बढता है!

अँधेरा बढ रहा था। घर मे बहाना बनाकर दामोदर घारपडे एक अनचालू गली के मोड पर सीटी बजाते हुए टहल रहे थे। दूर आती हुई तरबूजी रंग की साडी की झलक पाकर वे जोर से सीटी बजाने लगे। सीटी से बता दिया कि वे इंतिजार मे है। उधर साड़ी का आँचल दो बार ठीक करके सामने से आती हुई 'दीपशिखा सम युवति-जन' ने भी बता दिया कि वह वही है जिसका वे इंतिजार कर रहे थे! एक बार दामोदर धोखा खा चुके थे। अँधेरे में किसी दूसरी लड़की का उन्होंने हाथ पकड लिया था! इसीलिये तब से वे बराबर चाहते थे कि अपने गुप्त सकेतो मे इसे पहिले से ही जान लिया जाय कि वे वही है!

गली के मोड पर मिल कर दोनो गली के भीतर चले गए! अँधेरी गली में चलने मे उन्हे कठिनाई नहीं हुई। रास्ता दिन का देखा भाला था। मिलते ही दामोदर ने उस लडकी का हाथ दबाया और फिर दोनों ही गरम गरम लम्बी साँसें छोडते रहे जैसे कि भारी मुसीबत

के मारे हो ! एक दूसरे की गदेलियों मे उँगलियो मे गुदगुदाते हुए धीमें स्वरो मे उन्होंने प्रेमालाप शुरू किया--

'तुम बडी वैसी हो ! इतनी निठुर न बनो--तो क्या हो जाय ? इतनी देर से तुम्हारी इतिजार मे मेरी मुसीबत हो गई ! जाने कितनी बार आँखे छलछला आई ! एक एक घडी बरसो की तरह लग रही थी ! तुम अब अगर दो मिनट और न आती तो मै एकदम पागल हो जाता रजिनी !'

रंजिनी साडी का आँचल ठीक करती हुई मुस्करा उठी--(ऐसे अवसरो पर हमेशा उसका मुस्कराना ही नियत रहता !) । बडी अदा मे फिर रूमाल निकाला और माथे पर आए हुए पसीने की बूंदो को हल्की थपकी देकर सुखाने की चेष्टा करती हुई बोली--

'सच ? इतना प्यार क्यो करते हो मुझको ! किसी दिन अलग हो जायँगे तो जीना मुश्किल हो जायगा !' समाज के प्रेम संबंधी अवश्यभावी परिणाम की याद करके 'मिस' रंजिनी एक गहरी साँस छोड बैठी !

घोरपडे एकदम उत्साह मे भर गए। कुछ कहने से पहिले उन्होंने रजिनी का हाथ पकड लिया। उसे सीने से लगा लिया और फिर बोले--

'ऐसा न कहो ! ऐसा न कहो ! मै मर जाऊँगा ! मै मर जाऊँगा !! मै कही का नही रहूँगा ! मेरा चमन उजड जायगा !!' इस 'डायलाग' को कहने के लिये घोरपडे ने 'चमन' शब्द को खास तौर मे रटा था।

अँधेरी गली मे आगे बढते हुए घोरपडे बोले--

'हमरा प्रेम इसी तरह की अधी गलियो मे भटकता रहेगा !

हम उसका छोर कभी न देख पायेगे। पता नही किस दिन यह पता चलेगा कि अंधी गली के उस पार भी कोई रास्ता है! उफ !!'

इतना कह कर उन्होने रजिनी की ओर देखा। रजिनी ने भी स्वर में स्वर मिला कर 'उफ' कहा। उसके बाद वे गली के अँधियारे में कुछ देर के लिये जैसे खो गये। जब वे चेतन हुए तो उन्होने देखा कि वे उस अँधेरी गली को पार करके एक सडक पर आ गए थे। सड़क पर दामोदर के कुछ परिचित दिखाई पडे। उनसे दोनों ही कतरा कर निकल गये। अब दोनो को अपने परिचितो को काट कर निकल जाने मे अद्भुत मजा मिलता था। किसी पहिचाने हुए चेहरे से कतरा कर निकल जाने मे वे उस सफलता को पाते कि जैसे वे एक वैतरणी पार कर गए हो।

मरियल सा कटा पिटा चाँद अब आसमान मे आ गया था। उसकी रोशनी भी कुछ वैसी ही मुरझाई मुरझाई सी लग रही थी। रंजिनी और घोरपडे चलते चलते गगा के किनारे आ पहुँचे थे। दामोदर ने ऊँघते हुए एक मल्लाह को जगाया। नाव लेकर तीनो गगा पर फैली हुई मटमैली चाँदनी मे बिचरने लगे।

रजिनी चुप थी। वह चाँद के कटे हुए अश को देख रही थी। नाव धीरे-धीरे चल रही थी। दामोदर रजिनी के ठीक सामने बैठे हुए थे। मौन तोडते हुए सहसा वे बोले--

'चकोरी चदा को निहार रही है क्या?'

रंजिनी ने कुछ भी जवाब न दिया। वह फिर भी एकटक चाँद को ही निहारती रही। घोरपडे ने उत्तर की प्रतीक्षा न की। वे रंजिनी की गोद मे सर रख कर लेट गये। रजिनी कहानियो मे पढे हुए ढग से दामोदर के बालो मे धीरे धीरे अपनी उँगलियाँ फेरने लगी। नाव

चलाने वाले मल्लाह को घोरपडे ने मुह फेर कर नाव चलाने को कहा और उसके लिये पैसे भी कुछ ज्यादा देने को कहा !

नाव चलती रही। उतरते चाँद की मटमैली चाँदनी मे रंजिनी का मुह देखते हुए दामोदर ने कहा—

'कुछ गाओ रंजिनी !'

रंजिनी ने खाँस कर अपना गला साफ करते हुए गुनगुनानाया—

'नील गगन पर बादल डोले
डोले हर इक तारा !'

घोरपडे को यह गीत पूरा आता था। गोद मे लेटे ही लेटे, उन्होने आवाज लगाई—

'चाँद के अदर बुढ़िया नाचे
ठुमुक ठुमुक दिर दारा !'

गाते गाते वे बेचैन हो गए ! उनकी आँखे नम हो आईं।

रंजिनी के मन मे जाने क्या क्या बाते चक्कर काट रही थी। उपन्यास की नायिकाओं से वह अपना मिलान करना चाहती थी लेकिन हर जगह वह अपने को उनसे अलग पाती थी। इधर किसी उपन्यास को उसने पढा था जिसमे नायिका का 'एर्बाशन' दिखाया गया था ! फिर वह सोचने लगी कि क्या सचमुच इस युग की नायिका के लिए एबार्शन जरूरी है ? सहसा उसके अदर सोई हुई फ्लोरेंस नाइटेंगिल जाग पड़ती और वह कह उठी 'छिः ! कायर !!'

उधर रंजिनी के मन में यह ऊहापोह चल रहा था और इधर दामोदर घोरपडे उनकी गोद में पड़े पडे 'ओह ! ओह !!' करके तडप रहे थे ! एकाएक रंजिनी को यह याद आ गाया कि वह इस वक्त गंगा

में नौका बिहार कर रही है और इस सारे रोमांस में उनका कहीं पार्ट भी है! बोली--

'बहुत देर हो गई! अब मुझे वापस जाना चाहिए! अब वे भी आ गए होंगे। मैं न मिलूँगी तो वे मेरे बारे मे क्या सोचेंगे?'

घोरपडे बोले--

'रहने भी दो! कहने भी दो! चुप रहो इस वक्त! आह!! तुम्हें इस चाँदनी मे भी अपने घर की, अपने पति की याद आ रही है?. आखिर क्या मुझे डर नही है? मेरी पत्नी भी तो मेरी प्रतीक्षा कर रही होगी! वह भी तो मुझ पर नाराज होंगी! लेकिन मिस रजिनी प्यार कभी डर से मरता नही है! वह तो अमर है, अजिर है, पवित्र है पावन है। वह...' इतना कह कर वे 'ओह ओह!' करने लगे और उसकी गोद मे अपना सिर रगडने लगे।

जब रात काफी हो गई तो नाव किनारे लगी। उतर कर वे घर की तरफ चले। घर आते आते फिर दोनों आगे पीछे हो गये। पत्नी के लिये पति की तरह और पति के लिये पत्नी की तरह प्रतीक्षा करते हुए बेचारे नौकर ने उठकर दरवाजा खोल दिया। रंजिनी पहिले आ गईं और बैठक मे बैठ गईं। दामोदर बाद में आए। बैठक में उन्हे प्रतीक्षा करता हुआ मान कर बोले--

'माफ करना! आज बडे देर हो गई! वे लोग माने नहीं। जबर्दस्ती रोक लिया। काफी लम्बा प्रोग्राम था, क्या करें?'

अक्सर जब घोरपड़े घर में पहिले घुस जाते तो रंजिनी को यही वार्तालाप करना पड़ता था!

इसके बाद वे दोनों अपने अपने कमरों में चले गए। अपने

चेहरो पर उन्होने नाराजगी का भाव पैदा कर लिया। दोनो का खाना नौकर ने दोनो के अलग अलग कमरो मे लाकर परोस दिया। खाना खाकार, थाली कमरे के बाहर निकाल कर वे एक दूसरे से रूठ कर सो गए।

०

पाँच

तीन सप्ताह तक रोमास के इस कार्यक्रम का अभ्यास करते करते रंजिनी अब पटु हो रही थी। दामोदर ने इधर उसे कुछ वेशभूषा सबंधी दीक्षा भी दी थी। घोरपडे जी का यह कहना था कि प्रेम करने के लिये, न प्रेम करने के लिये, विराग के लिये, सन्यास के लिये, पढाई के लिये, सबके लिये, सब उम्र के लिये अलग अलग तरह की वेशभूषाएँ हैं! विभिन्न प्रकार की यह वेशभूषाएँ आदमी की चित्त-वृत्तियों पर सयम लगाती है, उनका मार्ग प्रशस्त करती है! घोरपडे ने उसे समझाया था कि पहिनावा का चुनाव विभिन्न प्रातो के हिसाब से न होकर, उम्र के हिसाब से होना चाहिये! इससे एक राष्ट्रीय वेशभूषा भी तैयार हो जायगी और वेश की अधिकतम उपयोगिता भी सिद्ध हो सकेगी।

मनोविज्ञानी घोरपडे का कहना था कि बचपन मे यदि फ्रॉक और जाँघिया से काम चल सकता है तो जवानी मे शलवार और गरारा उम्र की शोभा बढ़ाती है; अपने यहाँ पहिनी जाने वाली लाँगदार धोती को तो वे सिर्फ बुढ़ियों की राष्ट्रीय वेशभूषा मानते थे! चूंकि कपडे मानसिक वृत्तियो को भी निर्धारित करते है, इस-लिये वे उसके चुनाव पर बहुत जोर देते थे। उनका ख्याल था कि यदि अपनी चित्त वृत्तियों को शिथिल करने की जरूरत हो तो गेरुए रंग के ढीले कपड़े पहिनने चाहिए किंतु यदि वृत्तियों को सचमुच चचल

ही बनाना हो तो निश्चित ही ऐसे कपडो को पहिनना चाहिए जिसमे बदन का ज्यादा से ज्यादा हिस्सा बाजार के चलते हुए लोगों को दिखाना चाहिए ताकि उनके कलेजो पर साँप लोट जाय। साडी को वे अक्सर सिर्फ मन बदलने वाली चीज कहा करते थे। साड़ी के साथ पहिनने वाले वे ऐसे ब्लाउज बताते थे जो सिर्फ छः गिरह कपडे में तैयार हो जाते थे। अन्य वेशों में भी घोरपड़े जी का ख्याल था कि पहिनावा ऐसा ही होना चाहिए जो बदन के उन हिस्सों का उभार उम्दा ढग से दिखा सके, जिन्हे ढँकने के लिये कभी किन्ही मूर्ख आदमियो ने कपडे की सृष्टि की थी।

'मिस' सुब्बारजिनी को अब यह समझ मे आ गया था कि किस तरह का प्रेम करते वक्त किस तरह का कपडा पहिनना चाहिये! कहीं भी आते जाते या घर मे रहते वक्त, वे इस बात का ध्यान रखती कि उस अवसर पर किस तरह के कपडे पहिनने चाहिये और कैसे कपड़े उपयोगी सिद्ध हो सकते है! आध्र युवती ने अपनी सारी प्रातीयता की भावना वेशभूषा के संबंध मे भी छोड़ दी!

घोरपडे जी चूँकि मनोविज्ञान को जीवन से संबधित मानते थे और समझते थे कि वह उसे सर्वजन सुलभ बना कर ही दम लेगे, इसलिये उन्होने जीवन के सभी पहलुओ पर मनोविज्ञान की दृष्टि-कोण से सोचा था। परम भक्त श्री कृष्ण माधव जी मनोविज्ञान के इस प्रयोग को देख कर एकदम भौचक थे। एक दिन समय पाकर उन्होने घोरपड़े जी से पूछा--

'कपड़ों के बारे में आपकी जो धारणाएँ है, वह मुझे भाभी जी ने बतायी है! किंतु वह आपके सिद्धातो से अर्थात् अचेतन, पशु प्रवृत्ति और अखबार से कहाँ तक मेल खाती है?'

'क्यों नही? यदि हम अपने अचेतन मन को जान कर उसी के अनुसार कपड़ों का उपयोग करे तो क्या हमारी चित्त वृत्तियाँ नही सुधरेंगी? उसका भी विकास उसी ढंग से होगा!'

'खैर होगा! इसमें आप फिर सौंदर्य प्रसाधनों का क्या स्थान मानते हैं?' कृष्णमाधव जी ने अपने गुरु वकील श्री घोरपड़े के मुक्तिदायक सिद्धांतों की प्रशंसा के 'मिस' (यहाँ 'मिस'---अर्थात् बहाने!) यह भी पूछ डाला!

मनोवैज्ञानिक घोरपडे अपने गहन अध्ययन को जैसे टटोलते हुए बोले---

'व्यक्ति के जीवन मे सदा पूर्ण होने की आकाक्षा रहती है। यही चीज प्रवृत्ति बन कर हमारे अचेतन में घूमती रहती है! यद्यपि उपचेतन से उद्भूत कतिपय कुंठाएँ हमारे वैयक्तिक जीवन मे इस अपूर्णता को सदा दूसरे माध्यमों से प्रकट करती रहती है किंतु ध्यान से देखिए तो आपको खुद पता चलेगा कि वे कुठाएँ मात्र इन सौदर्य प्रसाधनों का अभाव है। हम जैसे हैं, यदि उससे अधिक अच्छे लग सके तभी हमे हर तरह का हार्दिक सतोष होगा। दूसरे अगर अस्लियत को समझने में साफ धोखा खा जायँ तो कितना आनंद मिलता है? उससे बढ़ कर और प्रसन्नता क्या हो सकती है? इससे दूसरे की तुष्टि होती है। किसी पुलिस कासटेबुल को साफ पहिचान लेने पर भी यदि आप उसे हवलदार साहब या दीवान जी कह कर पुकारें तो वह अपनी तरफ से आपका सात खून माफ कर देने के लिये चिल्लाने लगेगा।' सिद्धातो की व्याख्या करते हुए वकील साहब जुर्म के इस मसले पर गौर करके मुस्करा उठे!

'लेकिन फिर इसके लिये अखबार कहाँ तक सहायक सिद्ध होते

है? आप तो अखबार को भी इसी के साथ खीचते हैं ना?' कृष्ण-माधव जी ने जैसे उत्तर जानते हुए भी एक मूर्ख की तरह जान बूझ कर प्रश्न किया!

घोरपड़े उसी अदा से मुस्कराए जिस तरह याज्ञवल्क्य 'जाना चहहु राम गुन गूढा—कीन्ह्यो प्रस्न मनहुँ अति मूढ़ा!' कहते हुए मुस्कराए होंगे। बोले—

'आज का अखबार मानव-जीवन की रिपोर्ट नही देता, उसका निर्माण करता है! आज मानव की गति, उसकी अगति, उसका चेतन एवं अवचेतन इसी अखबार की ही देन है! बदलते हुए मानव मूल्यों की कसौटी, उसकी परख अखबार ही है! जब अखबार हमारे समस्त जीवन की प्रेरणा है तो फिर उसी के द्वारा सौदर्य प्रसाधन भी मामने आते हैं! किसी भी अखबार को देख कर आप यह जान सकते है कि संसार की या भारत की कौन सी फिल्मी तारिका कौन सा साबुन, तेल कघी, स्नो, पाउडर, क्रीम, शैम्पू, इत्र, मंजन, अंजन, लगाने के बदौलत ही उस ऊँचे स्तर की तारिका हो सकी है। उसी के साथ उनके अनमोल शब्द या उनका लिखा सार्टीफिकेट भी साथ मे नत्थी रहता है। इससे बडा सबूत और आप क्या चाहते है? अखबार न होते तो कौन इसके विज्ञापन करता और विज्ञापन न होते तो किस प्रकार सौदर्य प्रसाधनों के बदलते हुए मूल्य हमें पता लग पाते! जन-हित का मार्ग ही अवरुद्ध हो जाता!'

कृष्णमाधव जी, चूँकि सरल स्वभाव के थे इसलिये अक्सर कुछ समझ मे आ जाता था, अक्सर उनकी समझ में कुछ नहीं भी आता था! जो नही समझ मे आता था, उसके लिये वे कुछ एतराज भी नही कर पाते थे! लेकिन फिर भी वे अपनी ओर से घोरपड़े जी का

भाषण हमेशा शून्यवत् मुँह खोले सुना करते थे ताकि जो कुछ कान मे जाने से रह जाय वह मुह के जरिये पेट में ही चला जाय! ऐसा न हो कि कोई सूत्र वक्त जरूरत उनके अदर खोजने से न निकले! कृष्णमाधव जी अक्सर अपने खाली वक्त मे और खाली वक्त उनके पास बहुत था--घोरपडे के घर टहलते हुए आ जाया करते थे। ऐसे अवसर पर कभी कभी उनका व्यवहार देख कर इन्हे बड़ा ताज्जुब होता था। वैसे तो कृष्णमाधव जी काफी दुनियाँ देखे हुए आदमी थे मगर यहाँ पर घोरपडे जी के हर काम उन्हे एक विचित्र रहस्यमयता से ढँके हुए दिखाई पड़ते थे। उनमे वे कोई राज़ समझते थे इसीलिये वे चुपचाप उनकी लीला दम साध कर देखते और उसे अपने आप अकेले मे पसद करने की कोशिश किया करते थे!

बीस बाईस दिन तक वकील साहब अपने इस रोमास को चालू किये रहे। दोनों ही अपनी मासूम अदाओ से एक दूसरे को रिझाने का भगीरथ प्रयत्न करते रहे। पूरा दिन वे इस बात की खुशी में काट देते थे कि अभी शाम आएगी, वे अंधी गलियो में भटकेंगे, डूबी डूबी सी गरम सॉसे खीचेंगे, 'उफ उफ'' की आहे भरेंगे और फिर एक झटके के साथ गली के पार हो जायँगे!

रोज इसी तरह होने के बावजूद भी उनका मन खिचा खिचा रहा। मनोविज्ञानी घोरपड़े को सहसा यह भ्रम हुआ कि जो कुछ भी हो रहा है, इसमे उनका पूरा हाथ नही है! यह तो सब कुछ किसी के चाहने पर हो रहा है! वे किसी के इशारों पर नाच रहे है। उन्हें यह लगा कि उनका यह सारा प्रेम व्यापार अपने से उद्भूत न होकर एक प्रतिक्रिया मात्र है! प्रतिक्रिया का प्रभाव कभी स्थायी नही हो सकता, यह सोच सोच कर दामोदर घबडाने लगे।

'मिम' रजिनी भी इस नाटक से घबरा उठी थीं। बीस बाईस दिन मे ही उन्हे अपने पर जितना सयम और अनुशागासन लना पडा था, वैसी यातना उन्होने अब तक नही भोगी थी। घर मे जिस वक्त वे अकेले रहतीं, उस वक्त उन्हे अपना मन टटोलने का समय मिलता! उन्हे स्पष्ट लग रहा था कि उनका मन उनका विरोध कर रहा है! फिर भी वे चाहती थी कि किसी तरह वे अपने मन को ऐसा बना ले कि वह प्यार ग्रहण करने के लिये पूरी तरह से तैयार हो जाय! रजिनी को यही लगा कि अभी उनके तप में कही कुछ खोटा है जिसके कारण मनोवैज्ञानिक का तजुरबा पूरा नही उतर रहा है।

मुकदमे के लिये वकील साहब कचहरी बहुत कम जाते थे! हाँ, अक्सर अपने मनोवैज्ञानिक अध्ययन के लिये, कुछ विचित्र 'केसो' को देखने के लिये कचहरी जरूर चले जाया करते थे! उस दिन कचहरी तो वे जरूर गए लेकिन बराबर अपने रोमांस के बारे में ही सोचते रहे। सोचते सोचते उन्हे समझ में आया कि किसी से लगातार एक जैसा सबंध और निकटता बनी रहने पर, प्रेम नहीं बढ सकेता है! घर लौटे तो चाय का प्याला साथ साथ पीते हुए उन्होंने सुब्बारंजिनी से कहा--

'जो तुम कई दिन से सोच रही हो, वही मै भी सोच रहा हूँ! हमारे मन मे भी वही शकाएँ है! रोमांस का पूरा असर हमारे ऊपर नही पड रहा है! बात यह है कि हमे अब नया मोड़ अपनाना चाहिये। बिना नई गति और नई दिशा पाए हुए, रोमास अपने शिखर को नही प्राप्त कर सकता!'

रजिनी प्रायः ऐसे मोकों पर चुप रहती थी। आज भी चप रही।

घोरपडे ने जलती हुई सिगरेट के टुकडे से नई सिगरेट जलाते हुए कहा—

'यह तो मानना ही पडेगा कि हम अपने निश्चित कार्यक्रम की दिशा मे अपने आपको अनुशासित करने मे बहुत हद तक सफल हुए है! लेकिन इतना सा तजुरबा हमे सिर्फ आगे की राह दिखाता है! अगर हम इसका विकसित प्रयोग कर सके तो निश्चित ही हम दुखी दम्पतियों की भुथरी चेतना को अपने इस प्रयोग के रेगमाल से रगड कर चमका देगे! इसके लिये हमे तुम्हे फिर आगे कदम बढाना पडेगा! अगर हम ऐसा नही करते तो रोमास के इस कार्यक्रम मे भी वही ऊब हमे आकर घेर लेगी!'

'रंजिनी को अब जैसे होश आया। बोली—

'तो अब क्या करना होगा?'

'इसके लिये अब यह करना होगा कि हम और तुम अलग अलग रहे। मन से अलग रह कर भी हम घर के आगे झुक जाते है! घर की भौतिक चहारदीवारी हमे बराबर समझाती रहती है कि हम और तुम उसी घर के अश है! यही भूलना हमारे लिये सबसे आवश्यक है। जब तक हम यह नही भूल सकेंगे तब तक हम कुछ भी नही कर सकेंगे!'

'लेकिन यह भला कैसे होगा? आप...?'

'मै सोच रहा हूँ कि मै अपने घर के आस पास ही कोई मकान लेकर रहूँ। दो एक दिन से मैने तलाश भी शुरू की है! जब हम अलग घरो मे रहेंगे तभी हमारे मन की निकटता और शारीरिक दूरी बढेगी! मन की निकटता को अपने संवेगों मे अधिक प्रबुद्ध बना कर, हम उन सूत्रों को आसानी से पकड लेंगे जो एक ही मुहल्ले

मे रहने वाले युवक युवतियो मे सहज ही एक 'मुहल्ला-रोमास' का विचार जगा देता है !'

रजिनी समझ रही थी कि उसे अब अपने मन से लड़ाई लड़नी है! फिर भी भारतीय नारी का कर्तव्य है कि वह अपने पति के इंगितो पर चले । उसने एक बार तर्क फिर दिया--

'अब तक हम लोग जो कुछ करते धरते थे, वह घर के भीतर और लोगो की नजरो से दूर रहता था! अब आपके घर के बाहर रहने से भला दूसरे लोग कैसी कैसी बाते हम लोगो के बारे में कहेगे ?'

'लोग क्या कहेगे ?' यह सुनकर वकील साहब तैश मे आ गये। आज तक उन्होने 'लोग क्या कहेगे' के बारे मे न तो कभी सोचा था और न आगे सोचना ही चाहते थे! रंजिनी इस बात को जानती थी लेकिन फिर भी जान बूझ कर उसने वकील साहब के नाक पर रक्खी क्रोध की गठरी उतार कर उनकी जबान पर ला रक्खी।

'कौन क्या कहेगा, इसकी मुझे रत्ती भर परवाह नही है ? . . तुम्हे मेरी परवाह है या लोगों की ? कौन क्या कहेगा की जिम्मेदारी मेरे ऊपर है, आपके ऊपर नही ! !'

'लेकिन अगर कही मिसेज चारिया को भी यह पता चला तो . . .' मिसेज चारिया का नाम सुना कर रंजिनी ने वकील साहब के तैश पर जैसे दिसम्बर मे उनके सिर पर रात भर का रक्खा हुआ पानी उँडेल दिया। वकील साहब कुछ सकपका उठे। तर्क की दूसरी बानगी पेश करने हुए वकील साहब आगे बोले--

'मिसेज चारिया ? . . . तो क्या हुआ ? हम तुम समझा देगे ! बहुत होगा तो कैप्टन चारिया दो चार सेर टमाटर का रस पीने के

लिये मजबूर करेंगे और क्या ? मगर यह तो देखो ! यह तो मनोविज्ञान का इतना बडा तजुरबा होने जा रहा है जितना बड़ा आज तक ससार मे कभी हुआ भी नही ! तुमने क्यूरी दम्पति का नाम सुना होगा ! दोनो ने मिल कर विज्ञान को क्या दे डाला !! बिना अपने शरीर को कष्ट पहुँचाये हमारा तप पूरा नही होगा ! हमें अपने संवेगों को हर तरह से नियंत्रित करना होगा। यही तो हमारी प्रेरणा के स्रोत है। . . उन पर जय पाना ही हमारी असली विजय होगी। अच्छा देखो मुझे आज शाम को पिक्चर देखने जाना है। कई दोस्तो ने बुलाया है ! वक्त हो रहा है। बाते खत्म करो !!'

चाय की मेज पर से दोनो उठ गए। रजिनी यह इशारा समझ गई । अपनी सहेली घर ज्वॉयपार्टी मे जाने का कार्यक्रम बताती हुई वे भी अपने कमरे मे जाकर तैयार होने लगी !

तमाशा अपने मे हमेशा अच्छा ही लगता है ! इसी लिये लोग तमाशा देखना पसद करते है ! आदमियों की बात जाने दीजिए, सुनते है वह परमात्मा भी तमाशा देखने का काफी शौकीन है। जिसने इस सारी दुनियाँ का गोरखधंधा ही महज लुत्फ़ के लिये, लीला के लिये, बना डाला, वह फिर किसी भी तमाशे से क्यो इन्कार करेगा ? इसीलिये जब बैठे बैठाए उसे दामोदर और रंजिनी का तमाशा मुफ्त देखने को मिला तो उसने एक समझदार-दर्शक की तरह इसमें योग देना प्रारंभ किया। शायद इसी सहयोग का नतीजा था कि वकील साहब के घर के सामने अघोरनाथ चटर्जी नाम का पेंशन प्राप्त बंगाली जो कलकत्ते से आकर काशीवास कर रहा था, रातो रात भगवान भोलानाथ के चरणो में जा पहुँचा ! बूढ़े बंगाली के मरते ही वह मकान खाली हो गया। वकील साहब खुद भी पहुंच के

आदमी थे और दूसरे परमभक्त कृष्णमाधव जी से भी पूरी सहायता मिली। नतीजा यह हुआ कि मकान पर वकील साहब का कब्जा हो गया। कृष्णमाधव जी की तत्संबधी जिज्ञासा का उत्तर दामोदर ने यूँ दिया कि चूँकि उस छोटे से घर मे रह कर न तो पूरी तरह कच हरी के ही कागजात रक्खे जा सकते है और न उसमे हर वक्त मनोविज्ञान का अध्ययन ही सभव हो पाता है इसीलिये जितना लिखने पढ़ने का समय है, वह सब इस दूसरे घर मे बिताया जायगा ।

वकील साहब के सामने का यह दुमंजिला मकान दो आदमियों के एक परिवार के रहने के लिये काफी था। बल्कि उस मकान की मकानियत को ठीक तरह से समझने के लिये आप यह समझे कि पुराने जमाने से वह परिवार-नियोजन की योजना को ध्यान मे रख कर ही बनाया गया था। छोटा होने के अतिरिक्त मकान और भी कई अच्छाइयाँ थी—मसलन, घर के सामने कोई फुलवारी की जगह नही थी क्योकि बनारस के लोग घर के सामने फुलवारी न रख कर घर से बीस मील की दूरी पर अपनी बगिया रखने मे विश्वास करते थे ! (शायद उनका यह ख्याल रहा हो कि घर के सामने फुलवारी रखने से मन की वे भावनाएँ ज्यादा जोर मारेंगी जो दुनियाँ मे और किसी काम का नही रहने देती ! !), घर के हर कमरे यानी तीनों कमरे सिर्फ इतने बड़े थे कि उनमे एक ही चारपाई पड़ सकती थी (दो चारपाइयों में स्वास्थ्य की हानि की संभावना रहती है न !), मकान का आँगन एक गहरा कुँआ जैसा लगता था (उसमें धूप से बचत होती थी !) मकान में एक छत भी थी लेकिन वहाँ तक पहुँचने के लिये कोई सीढ़ी नही थी ! गरमियों में छत पर लेटना, फिर मुहल्ले मे रहकर, यह किसी भी मियाँ बीबी को शोभा नही देगा,

शायद यही सोच कर मकान मालिक ने शालीनतावश सीढियाँ नही बनवाई थी ! फिर भी उसमे एक सबसे बडी अच्छाई यह थी कि ऊपर एक कमरा था। कमरे के सामने एक छज्जा था जो सडक पर खुलता था ! यह कमरा और छज्जा बिल्कुल ठीक वैसे ही थे जैसे कि खुद वकील साहब के घर मे थे ! छज्जा ही देख कर मनोविज्ञानी दामोदर के मुह मे पानी भर आया था और उन्होने इसे पाने के लिये जी तोड कोशिश की थी !

आपने इस कहानी को जब यहाँ तक यूँ जान लिया है तो अब आगे जरा दूसरे रूप मे सुनिए ! ऐसा समझने मे आपको कुछ आसानी भी होगी क्योकि आपको सभी चीजे अपनी लगेंगी !

कुछ दिन हुए एक खाली मकान मे कहीं से एक नवयुवक आकर बसा। नवयुवक अभी कमसिन था। उसकी मासूमियत उसके चेहरे पर बरस रही थी ! वह एकदम अकेला था और इस शहर मे नया नया आया था। उसकी नौकरी शायद इसी शहर मे कही लगी थी। शाम हो रही थी। पास पडोस के घरों मे चिराग जलने लगे थे। मगर वह नवयुवक चुपचाप बैठा हुआ था। उदास,—दरवाजे के सामने, सूने आसमान को देखते हुए ! वह बडा अनमना लग रहा था।

उसे तो पूरा शहर वीराना और अपरिचित लग रहा था। जैसे किसी की याद उसे सता रही थी। एकाएक वह आहिस्ता से उठा। उलझी हुई अपनी किताबो के ढेर को वह सहेज सहेज बेंत और बाँस की छोटी छोटी इल्मारियो मे रखने लगा। उसका मन नही लगा।

वह फिर आकर दरवाजा पकड कर सूने आसमान की तरफ देखने लगा! सहसा सामने वाले मकान के ऊपर वाले कमरे की खिडकी खुली। युवक एकटक निहारने लगा। नीली नीली रोशनी के बीच उसे एक अत्यत सुन्दर रमणी का आधा धड बार बार आता जाता और सामान को इधर उधर रखने मे व्यस्त दिखाई पड़ रहा था। अपने कमरे का सूनापन युवक को भूल गया। नवयुवक चुपचाप उस युवती के कार्य कलाप को देखने मे मगन हो गया। नवयुवक उसे देख रहा था मगर रमणी को यह जरा भी पता न लगा कि किसी की रसमय निगाहे उस पर डोल रही है! रमणी को देख कर नवयुवक के मन मे बडी अजीब अनपहिचानी सी धडकन होने लगी! उसे इस रमणी मे ऐसा आकर्षण दिखाई पड रहा था कि वह अपना आपा भूला जा रहा था। यदि बीच मे सडक न होती तो अब तक वह उस कमरे में इसी सम्मोहन मे खिच कर पहुँच गया होता! उसका सारा सूनापन, अकेलापन और उदासी इसी आकर्षण मे बिध गए!

सहसा खिड़की बंद हो गई। नीली रोशनी की एक हल्की लकीर अब भी रोशनदान से आती रही! नवयुवक बड़ी देर तक उसी नीली लकीर को देखता रहा फिर वह अपनी किताबो को सम्हालने लगा। उसका मन नही लग रहा था। सीढियो से उतर कर वह पास के ही एक होटल मे खाना खाने गया। खाना वह खा ही रहा था, कि सामने

से उसने सहसा उसी रमणी को तेजी से जाते देखा। जब तक वह यह देखता कि वह कहाँ गई, तब तक वह आँखो से ओझल भी हो गई। खाना खाकर नवयुवक किसी तरह घर वापस आया। बद कमरे मे वह चपचाप अपनी चारपाई पर अपना बिस्तरा खोल कर पड गया। उसे नीद नही आ रही थी। वह करवटें बदल रहा था। बार बार उसे सामने वाले घर की युवती का चेहरा याद आ रहा था! 'ओह, कितनी अच्छी है, यह सामने वाले घर की औरत! पता नही कौन है? पता नही इसके घर में और कौन कौन है? काश . . .!' उस पर कमरे का सूनापन फिर छा गया और वह फिर हर करवट बदल कर अपने तकियों के 'पोजीशन' बार बार 'एडजस्ट' करके सोने की कोशिश करने लगा!

सुबह हुई। नवयुवक उठ कर जब अपने छज्जे पर खडा हुआ, मुलायम रेशो वाली तौलिया कंधे पर डाले मैकलीन टूथ पेस्ट से दाँतो पर ब्रुश चला रहा था उसी वक्त सहसा फिर सामने के कमरे की खिड़की खुली। वही रमणी इस बार फिर सामने थी। उसने खिडकी पर शीशा ला रक्खा और उसके सामने खडी होकर अपने बालो को गूथने लगी। लोटे के पानी को मुह मे डाल कर जब नवयुवक ने जैसे उसका ध्यान खीचने के लिए जोर जोर से गरारा करना शुरू किया तो उस रमणी ने सच ही अपनी आँखे उठाई। दोनो की आँखे चार हो गई! कुछ देर के लिए दोनो अपने आपे को भूल कर एक दूसरे को देखते रह गए! रमणी के बालो मे कंघा जहाँ फंसा था, वह वही रुका रह गया। नवयुवक भी एक क्षण के बाद, जैसे इस बात को समझ पाया कि यह सब क्या हो रहा है! वह शर्मा

गया । रमणी भी झेप गई ! उसने मुस्करा कर खिडकी बद कर ली !

खिडकी बद हुई और नवयुवक जैसे एकदम बेचैन हो गया। उसे आज जीवन में पहिली बार लगा कि कोई ममता भरी आँखे उसे निहार रही थी। उसे यह महसूस हुआ कि उन आँखो मे जरूर, हो न हो, कही प्यार छिपा हुआ है ! आखिर वह लडकी इतने गौर से क्यो देख रही थी ? नवयुवक यही सोचता हुआ अपने कमरे मे आ बैठा। खुद उसमे ऐसा आकर्षण नही है ! कोई परिचय भी नही है, पर फिर ऐसा क्यो हुआ ? नवयुवक यह सब सोच ही रहा था कि कमरे की खिडकी फिर खुली और उसमे से वही खिलखिलाता हुआ चेहरा फिर झाँकने लगा। इस बार इस नवयुवक ने उस रमणी का पूरा चेहरा सचेत होकर देखा ! खिडकी इस बार खुली ही रह गई लेकिन वह चेहरा वहाँ से हट गया।

इस तरह कई दिन बीते। खिडकी बद होती और खुलती रही। छज्जो और कमरो मे प्रणय की बाती विकसित होती रही । इस बीच नवयुवक ने मुहल्ले मे घूम घाम कर यह जानकारी कर ली होगी कि वह रमणी कौन है और क्या काम करती है ! अब वह उसके बारे मे धीरे धीरे सब कुछ जान गया था। उसकी हिम्मत भी पहिले से बढ गई !

एक दिन उससे जब इस तरह साँसे भरते और कायरो की तरह कमरे मे लेट कर अपने भाग्य को कोसने से मन ऊब गया तो उसने हार कर कागज की एक चिट फाडी। फाउन्टेनपेन लेकर वह बैठ गया और उसने सोचा कि आज वह किसी न किसी तरह अपने दिल का सारा उच्छ्वास निकाल ही डालेगा ! उसने सोचा आखिर इस तरह मन

में घुटते रहने की व्यथा ही तो हमारे समाज की सबसे बडी देन है! उसने तै किया कि वह समाज को तोड डालेगा! अब वह हरगिज नही मानेगा! उसके मन का चोर एक बार उसका हाथ पकडने को तैयार हो गया लेकिन वह सच्चे 'साहु' की तरह हाथ न आया। उसने फाउन्टेनपेन जोर से पकड लिया। सोचने लगा कि किस तरह का सदेश वह उसे भेजे जिससे कि किसी भी तरह के भ्रम की गुजाइश न रह जाय। अपने हाव भाव और अपनी हरकतो से दोनो छज्जे से ही काफी खुल चुके थे अब सवाल सिर्फ अपनी भड़ास को व्यक्त करने भर का था! इसीलिए, अब वह इस संदेश मे किसी तरह का भ्रम नही रहने देना चाहता था। अत में उसने 'डाइरेक्ट एक्शन' (सीधी कार्रवाई) लेने की सोची! उसने चिट पर लिखा—

मैं तुम पर मरता हूँ।

इतना लिखने से उसे पूरा यकीन हो गया कि इससे भ्रम की कतई गुजाइश नही रह जायगी। उस लडकी को यह समझ मे ही आ जाना चाहिए कि नवयुवक क्या चाहता है! उस कागज की चिट की गोली बना कर वह बैठ गया। उसने तै कर लिया कि अबकी खिड़की जैसे ही खुली तैसे ही वह यह गोली इस छज्जे पर से उसके कमरे में फेक देगा और अपने भाग्य का निर्णय कर लेगा। पर भाग्य की ही बात, कि उस दिन दिन भर खिडकी बंद ही रही। नवयुवक दिन भर हाथ में वह गोली लिए बैठा ही रहा लेकिन उसे वह गोली फेंकने का अवसर न मिला। इंतिजार ही इंतिजार में वह उस दिन होटल में खाना खाने भी नही जा सका। पर उस वज्र-हृदया खिड़की के पट नही खुले! नवयुवक एक बार घबड़ा उठा। तरह तरह की बातों से उसका मन डोलने लगा। शायद वह औरत, इसके आवारापन से ऊब कर कहीं

दूसरी जगह रहने के लिए तो नही चली गई ! कही ऐसा तो नही है कि वह जो कुछ भी प्रेम समझ कर कर धर रहा था, उसे वह मात्र मूर्खता समझ रही हो और उसी पर हास्यास्पद ढग से हँसती रही ! नवयुवक यह सोच कर भी एक बार हडबडा उठा कि कही उसने पुलिस मे खबर न कर दी हो ! फिर उसने सोचा कि कही ऐसा न हो कि उसके कुछ और रिश्तेदार आ गए हों, और वह रमणी उन सब मे आज बेहद व्यस्त हो। ऐसी हालत मे वह कागज की गोली फेकना ठीक होगा या नही; दिमागी चक्करो के फेर मे वह टकटकी लगाए खिडकी की तरफ दिन भर देखता रहा ! इतवार की छुट्टी का दिन था, अन्यथा जिस मनोयोग से वह देख रहा था उसके लिए उसे एकाध दिन की छुट्टी भी लेने की जरूरत पड सकती थी ! आखिर-कार खिडकी खुली और उसमें से वही खिलखिलाता हुआ चेहरा नीली रोशनी के बीच करीब दस बजे रात मे झाँकता दिखाई पड़ा ! अपने इधर उधर के ख्यालों में नवयुवक इतना डूब गया था कि उधर ही देखते रहने पर भी उसे यह नही पता चला कि खिडकी खुल गई है ! अनाथ की तरह युवक को विचारो मे डूबा हुआ देख कर उस रमणी ने खाँसा। तब इसने चौक कर उसकी ओर देखा। देखते ही इसने अपनी मुट्ठी मे बद की हुई गोली उसकी तरफ फेक कर मारी ! सामने से ढेला आता हुआ देख कर उस रमणी ने इसे पागल समझ कर, डर के मारे खिड़की भड़ाक से बद कर ली। खिड़की बंद हो जाते देख और संदेश के उचित स्थान तक न पहुँच पाने के भय से उस युवक का दिल बैठने लगा। उसी वक्त जाने क्या सोच कर वह रमणी छज्जे पर दरवाजा खोलकर निकली और उसने वह गिरी हुई कागज की गोली उठा ली। यही सच्चा प्रेम था ! नवयुवक ने

उसे हल्की नीली रोशनी के बीच उस कागज को खोल कर पढ़ते हुए देखा। उसका दिल बल्लियों उछलने लगा! उसके भाग्य का निपटारा इसी क्षण होने वाला था! यही क्षण था जब उसे यह आभास हुआ कि स्वर्ग और नरक के ठीक बीचोबीच भी कोई विश्रामस्थल है जहाँ वह इस वक्त पहुँच कर ठहरा हुआ है! आखिर उसने देखा कि वह लड़की एक दूसरे कागज पर कुछ लिख रही है। इतना ही देख कर उसे चैन पड़ गई। यदि उसका रुख कुछ दूसरा हुआ होता, तो वह उसके लिखे हुए कागज को फाड़ कर फेक देती और कुछ भी जवाब न देती!

युवक धड़कते मन से प्रतीक्षा ही कर रहा था कि सामने के कमरे का दरवाजा बंद हो गया। रोशनी आनी बंद हो गई और उधर युवक के मन पर अँधेरा छा गया! खिड़की फिर खुली। उसमे से उसका चेहरा फिर निकला। इस बार उसके हाथ मे एक कागज की गोली थी जो उसने इस युवक के कमरे की ओर फेंकी। कमजोर हाथों से आई हुई वह कागजी गोली छज्जे पर ही गिर पड़ी। युवक बिजली के मानिद लपका। आती हुई कागज की गोली उसे नीली रोशनी मे टूटे हुए सितारे की तरह लगी। उसने कागज उठा लिया। धडकते हुए दिल से और काँपते हुए हाथों से उसने उस गोली को खोल डाला। रोशनी मे लाकर उसे किसी तरह जल्दी जल्दी पढ़ने की कोशिश करने लगा। पेंसिल से लिखा हुआ था। कुल दो शब्द थे :

मैं भी

अपने विचारों में वह इतना खो गया था कि सहसा उसे इस 'मैं भी' का अर्थ ही समझ में नही आया। थोड़ी देर बाद जब उसके अवचेतन से उसका वह पुराना वाक्य विचार-मंथन के बाद अमृत

कुण्ड की भाँति बाहर निकला तब उसकी समझ में आया कि 'मै भी' के मतलब है—अर्थात् 'मै भी' मरती हूँ।' जैसे ही उस युवक के समझ मे यह आया कि सामने के घर में रहने वाली वह साँवली स्वरूप की रमणी भी उसे उतना ही प्यार करती है तैसे ही वह उठ कर नाचने सा लगा! वह जैसे मस्त हो गया। उसे प्यार हो गया था!! सच्चा प्रेम इसी को कहते हैं!!

दिन भर प्रतीक्षा मे बैठे बैठे वह भूख प्यास भुला बैठा था। सफलता मिलते ही उसे अपनी भख की याद आई। उसने फिर जल्दी जल्दी एक कागज की गोली बनाई और उस पर लिखा .

आज दिन भर क्यो नही दीखी ?

गोली ठीक निशाने पर जा गिरी। एक क्षण मे जवाब आया—

आज दिन भर छुट्टी थी। पिकनिक पर गई थी।

युवक की जान मे जान आई। उसकी सारी शंकाएँ निर्मूल थी, यह जान कर उसे जो चैन मिला, वह अदाज के बाहर की चीज थी।

इसी तरह गोलियाँ का क्रम चालू रहा। वे अपना परिचय दे और पा चुके थे। एक दिन, उसने फिर गोली बनाई और दज किया :

अच्छा, अब आगे क्या हो ?

गोली के जवाब में दूसरी गोली आई :

'कल्पना होटल मे रोज सुबह शाम खाना खाने जाती हूँ। जब मिलना चाहो वही मिलना। घर के अंदर नही। मुहल्ले के लोग बहुत खराब है। बेकार शक करना इनका काम है! होटल में भी यदि किसी से मेरी चर्चा करना तो अपनी दूर के रिश्ते की बहन बताना। मै तुम्हे सबके सामने 'मेरे भाई लगते हैं' ऐसा ही कहूँगी।'

रमणी जिस होटल में जाती थी, युवक उसे नही जानता था।

एक दिन उसका पीछा करके उसने उस होटल का पता लगा लिया। दूसरे दिन वह उसके पीछे दस मिनट बाद वहाँ पहुँच गया। युवक ने भी उसी होटल वाले से अपने खाने पीने का महीनेवारी हिसाब तै कर लिया। अब वह बराबर यही खाना खाएगा। अब घटना चक्र तेजी से आगे चलता है। सहसा उसकी निगाह सामने मेज पर एक कोने मे बैठी हुई उसी युवती पर पड़ती है।

'अरे! तुम यहाँ?' कह कर युवक उसी मेज की तरफ़ बढ़ता है।

'अरे भाई साहब आप? आप यहाँ कहाँ?' दोनों ही अपने साधारण स्वर से कुछ ऊँचा करके इसलिए बोल रहे हैं कि होटल का मैनेजर और आने जाने वाले बेचारे इस बात को अच्छी तरह सुन ले और फिजूल शक की निगाहों से उन्हे न देखे!

युवक उसी मेज पर खाने के लिए बैठ जाता है। होटल का बेयरा उसका भी खाना लाकर उसी मेज पर लगा देता है। युवक नमक की शीशी उठाता है और कभी प्लेटों को इधर उधर खिसकाता है। रमणी उसकी सहायता कर देती है! इस सब में उनकी उँगलियाँ एक दूसरे के हाथों की उँगलियों से छ जाती तो युवक काँप उठने की कोशिश करता! खाना खाते खाते अगर कभी दोनों के हाथ पास पास देर तक रह जाते, या ग्रास मुह में रखते समय दोनों अपने सिर झुकाते और दोनों एक क्षण को एक दूसरे की गर्म गर्म साँसें महसूस करते तो युवक को कविता की किताबों में पढे हुए 'सिहरन' और पुलकन' जैसे भूले बिसरे शब्द याद आने लग जाते। जब कभी इतने मे भी मनोवांछित प्रतिक्रिया नही मिलती तो युवक इधर उधर देख भाल कर चुपके से मेज के नीचे अपने पाँवों से उस रमणी के पावो का टटोलने और फिर उनको अत्यत मुलायमियत

के साथ दबाने की कोशिश करता! ज्यो ज्यों पाँव दबता है, रमणी का चेहरा खिल उठता है!

तीन दिन से यही हो रहा है। रमणी जाने लगती है तो कभी जान बूझ कर अपना रुमाल जमीन पर गिरा कर चली जाती। युवक रुमाल उठा लेता है। घर ले जाकर जब वह उसे खोलता है तो उसमे अक्सर उसे एकाध कागज की चिट मिलती जिन पर लिखा रहता है:

'निष्ठुर! मुझे कब तक इस तरह तडपाते रहोगे?'

युवक उसे चारपाई पर लेट कर बार बार पढता है। उसकी आँखो से बेबसी के आँसू छलछला पडते हैं! दस बार वह उस पुर्जे को चूम चूम कर पढता है तो ग्यारह बार उसकी आँखों से आँसू बुल्ल बुल्ल करके गिरने लगते है! युवक सामने के घर से निकलती हुई नीली रोशनी को टकटकी लगाए देखा करता! हर बार रोने के बाद वह उठता है, शीशे के सामने खड़ा होकर मुँह पर क्रीम और स्नो मलता है और फिर बाहर की तरफ झाँक कर देखता है कि सामने वाले घर की खिडकी अभी तक खुली कि नहीं!

युवक हर बार रमणी से घर पर मिलने की आज्ञा चाहता है किंतु रमणी घर पर नही मिलने देना चाहती! हार कर उसे बार बार होटल में ही मिलना पड़ता है; वह भी कुछ ही देर के लिए। बाकी समय मे या तो वह दर्शन से या फिर गोलियो से अपना मन बहलाव कर सकता है! गोलियाँ दिन दहाड़े चलाई भी नही जा सकती जब सड़क पर आने जाने वालो की निगाहें उस पर अनायास ही पडे और....?

यह सारी घुटन, बेबसी और उसकी अपनी सीमाएँ कमसिन युवक के भीतर चीख रही हैं! वह बेचैन होकर अपने बाल नोचने

लगता है, अपने कपड़े फाड डालता है और फिर भी जब उससे नही रहा जाता तो वह अपनी बेसीढी वाली छत पर बंदरो की तरह कूद फाँद कर चढ़ जाता है और दिन भर चिल्ला कर वहाँ मे 'मेघदूत' का पाठ करता है। जो ही उधर से निकलता उसे अक्सर सुनाई पडता है——

नन्वात्मान बहु विगणयन्नात्मनै वावलम्बै
तत्कल्याणि त्वमपि नितरा म गमः कातरत्वम्
कस्यात्यन्त्र सुखमुपनतं दु ख मेकान्ततो वा
[illegible] च दशा चक्रनेमिक्रमेण !

लेकिन काशी के वेदपाठी-वातावरण मे किसी को एक बार भी यह चिता नही व्यापती कि यह युवक कौन है, और इसे क्या हो गया है? कभी सामने वाले घर की छत पर से रात में युवक को गुन-गुनाहट में कुछ कुछ यह सुनाई पडता——

'बेदर्दी बालमा कच्ची उमरिया न चीन्हे।'

उस वक्त युवक मे रहा नही जाता। वह भी अपने कमरे मे लेटे लेटे, या कभी जरूरत पडने पर छज्जे पर आकर भी, अपनी मोटी और कुछ कुछ बेहूदी आवाज मे टेरता है——

'तडपत बीते दिन रैन!'

रमणी की आंखो से युवक को यही लगता है कि उसके जीवन म जैस एक भारी परिवर्तन आ गया है। वह दीवानी सी हो गई है। युवक उसी रस में डूबता जा रहा है। दोनों मगन हैं। सच्चे प्रेम में यही होता है!!

जैसा कि हर समझदार अब तक समझ गया होगा, आपसे भी यही उम्मीद है कि आप यह जान गए होगे कि यह युवक और कोई नही स्वयं स्वनाम-धन्य दामोदर विष्णु घोरपड़े थे और वह रमणी भी कोई नही स्वयं महारानी सुब्बारजिनी जी ही थी।

०

छः

भोर हो रही थी । आसमान की गोद में उषा की रक्तिम आभा महावर लगे उन पाँवों की तरह लग रही थी जो अब सुबह आई जान कर हट जाने के लिए तैयार थे । जैसे चिड़ियो की चह-चहाहट उन पैरों को ताना मार रही थी। हर पेड मूर्तिमान होकर कलरव करने लगा था गोया एक दूसरे से उनके बात करने का वक्त आ गया। जाड़े के मारे गंगा स्नान करने वाले पुण्यार्थी विभिन्न स्वरों मे तरह तरह की आवाजें लगाते, सड़क के सन्नाटे को तोडते हुए चले जा रहे थे। कोई 'शंकर शंकर बम भोला' की रट लगाता तो 'शंऽऽऽऽकर' को इस तरह खींच कर कहता कि जैसे अपनी देह का सारा जाडा वह उसी खीच में निकाल देगा। दूसरा मंत्र की तरह रटता निकलता 'गंगा गंगा को जो बिसारे', वह जीती बाजी हारे।' कोई 'हर गंगे' और 'बम भोले' का नारा लगाता निकलता! 'बम भोले' कहने वाला भक्त सम्प्रदाय इस बात का अवश्य ध्यान रखता कि वह बम के उच्चारण में बम फटने की ध्वनि-साम्य अवश्य उपस्थित कर दे ताकि माया रूपी निद्रा में सोने वाले जान जायँ कि अब जगने का उपयुक्त अवसर आ गया है (क्योंकि वे खुद जाग गए हैं!!)। 'जै शंकर जै जै शंकर' कहने वालों को जाड़ा जितनी जोर का लगता उतने ही प्रकम्पित स्वरों को सुदृढ़ करके वह 'जै शंकर, जै जै शंकर' को 'झै शंकर, झै झै शंकर' पुकारने लगते थे। सारा वातावरण एक

ही बात प्रतिध्वनित करता था, वह यह कि मुक्ति पाने का यही एक स्वर्ण सुयोग है। धीरे धीरे गंगा की लहरों पर 'भगवान् भुवन भास्कर' की किरनें उतर कर नाचनें लगीं। काशी के घाटों की छवि नई सुहागिन की तरह सजल हो उठी।

हो सकता है कि आप कहें—'उहँ, यह क्या बकवास लगा रक्खी है! हमे 'भगवान भुवन भास्कर' से क्या मतलब? आप हमें यह बताइए कि दामोदर और रंजिनी का क्या हुआ? बाकी यह सब कि काशी के घाटो की छबि कैसी होती है, भगवान भुवन भास्कर कैसे उदय होते है, कैसे अस्त होते है, पक्षी बोलते है तो चहचहाहट होती है कि कलरव होता है, यह सब हम भी जानते है! हो सकता है आप से अच्छा जानते हों। आप अपना काम कीजिए!' तो इसके जवाब में मै आपको साफ बता दूँगा कि जनाब! यहाँ मै उन उपन्यासकारों का हथकंडा इस्तेमाल कर रहा हूँ जिनके पास अपना कहने को कुछ नही होता और फिजूल 'भगवान भुवन भास्कर' के पीछे हाथ धोकर पड़े रहते है! वे दरअस्ल कलरव सुन कर उतने मगन नही होते जितना अपनी कृति का कलेवर बढ़ते देख कर प्रसन्न होते है! मगर देखिए, आपके टोकने के पहिले ही मै समझ गया कि अब आप टोकने ही वाले है। आखिर यही सब तो ऊर्ध्व चेतना एवं अवचेतना आदि कहलाती होगी!!

खैर आइए। किस्से पर आइए! इतना सब कुछ कहने सुनने का नतीजा इतना तो आप निकाल ही लीजिए कि सबेरा हो गया था और दामोदर घोरपडे अपने बिस्तर में पडे पडे अलसाई आँखों को बार बार मुलमुलाते हुए जाग रहे थे!

पास पड़ी सिगरेट की डिबिया से एक सिगरेट खींच कर उन्होंने

निकाला। फिर उसे जलाया। लेट कर थोडी देर पीते रहे। पास पडे अखबार को उठा कर पढने लगे। थोडी देर बाद उठ बैठे। निवृत्त हुए। छज्जे पर रोज की तरह जाकर हाथ मुह धोया। फिर कुर्सी छज्जे पर निकाल कर धूप की एक किरन का सहारा लेकर, अखबार हाथों मे लिये, वही बैठ गए। चाय का प्याला अभी तक सामने ही वाले घर से आता था। नौकर चाय बना कर दे जाता था। वे अखबार पर एक उड़ती उड़ती सी निगाह डाल कर सिगरेट के धुएँ के गोल गोल छल्ले बना कर छज्जे के बाहर उडा रहे थे। चाय की वे उतनी प्रतीक्षा नही कर रहे थे जितना सामने वाले घर की खिड़की के खुलने की! खिडकी अभी तक खुली नही थी। हालाँकि उस घर के भीतर की कुछ चहल पहल सुनाई पड रही थी।

सामने वाले घर से नौकर बाहर निकला। उसके हाथ मे चाय का प्याला नहीं था। नौकर इस घर मे घुसा भी नही। बाहर से ही उसने आवाज लगाई--

'बाबू जी! डाक्टर साहब औ उनके मेम सा'ब आई है। बीबी जी चा पीने को बुलाती है!'

अक्सर वक्त निकाल कर वकील साहब कैप्टन चारिया के यहाँ हो आते थे लेकिन इस बीच उनका जाना कुछ कम हो गया था। डाक्टर चारिया तो और भी कम आते जाते थे। मगर आज सुबह सुबह ही उनका, अपनी श्रीमती के साथ आगमन सुन कर दामोदर के कान खडे हो गए। समझ गये कि अब बिना हरी तरकारी का छिल्का खिलाए, डाक्टर चारिया नही छोड़ने वाले है! नई सिगरेट जलाते हुए घोरपडे, इस घर मे ताला बंद कर, उस घर में कई हफ्ते बाद जा पहुँचे।

सामने ही कैप्टन चारिया अपना 'बरानकोट' और एक मोटा सा पतलून पहिने खड़े थे। कैप्टन चारिया के पास अब भी कुछ चीजें ऐसी थी जो याद दिलाती रहती थी कि वे फौज में थे। 'बरान कोट' इन्ही चीजों मे से एक था। दामोदर को देखते ही वे अपने चिर-परिचित लहजे में 'हो हो' करके हँसे और बोले—

'अरे भाई! नए साल की बधाई! हम तो आपके घर बधाई देने के लिये आए और आप है कि अपने ही घर से गायब है? मियाँ बीबी मे कुछ खटपट हो गई है क्या, जो सुबह सुबह ही दोनों अलग पाए जा रहे हो?' उन्होने अपना मजाकिया 'टोन' जरा उछाला।

मिसेज हरनाम चारिया रंजिनी के साथ भीतरी बरामदे में बाते कर रही थी। वकील साहब की आवाज सुन कर इधर आ गई। दामोदर के प्रणाम का जवाब देते हुई कहने लगी—

'क्यो भाई! यह क्या बात है? सुना अब तुम लोग दो दो घर ले कर रह रहे हो? क्या पैसे बहुत बढ गये है? बड़े बडे पैसे वालो को मैने देखा है लेकिन ऐसा कही नही देखा कि पैसे बढ जायँ तो मियाँ बीबो अलग अलग घर मे रहने लग जायें?'

घोरपडे जानते थे कि यह सवाल आज जरूर पूछा जायगा मगर यह पहिला ही सवाल होगा, यह वह नहीं जानते थे! इस तरह अप्रत्याशित ढंग से यह सवाल आया हुआ देख कर वे कुछ सकपका उठे। वे कुछ कहते इसके पहिले ही श्रीमती रंजिनी ने एक भारतीय पत्नी की भाँति सारी मुसीबत अपने सिर ओढ लेने की चेष्टा की।

'नहीं भाभी जी! बात यह है कि आप तो देख ही रही है कि यह घर कितना छोटा है। वकील साहब, आज कल कुछ विशेष कार्य कर रहे है। वकालत करने के लिये भी काफी पढ़ाई करनी पड़ती है।

उसके लिये घर मे इतनी जगह ही नही है कि वे अपने सभी कागज पत्र फैला कर एक ही जगह रख सकें। अक्सर वकील साहब के कमरे मे काम धाम फैला रहता है। कभी मेरे मिलने वाले भी आ गए तो उनको बडी झंझट होती है। खुद इन्ही के मिलने वाले इनको अक्सर परेशान किया करते है। इत्तिफाक से यह सामने वाला घर खाली हुआ तो इन्होने ले लिया! और कोई खास बात नहीं; बस समझिए भाभी जी, कि अपने छोटे घर का हमने थोडा और विस्तार कर लिया है! बीच में सडक पड गई नही तो आप को पता भी न चलता कि ये दो मकान है! अब इनके मिलनेवाले आते है तो मै कहला देती हूँ कि नही है। ये सामने वाले घर मे बैठे बैठे लिखते पढते रहते है।' रंजिनी ने एक ही सॉस मे सब कुछ कह दिया।

दामोदर घोरपड़े इस सवाल से बेतरह घबडा उठे थे। एक तरफ उन्हे मिसेज चारिया की डॉट और दूसरी ओर डाक्टर चारिया के विटामिनो के नुस्खे का भय था। ऐसे भी बराबर मिसेज चारिया के सामने बाते करते वे कुछ घबडाते थे। आज का सवाल सुन कर तो उनकी अक्ल बिल्कुल ही गुम हो गई थी। परन्तु जिस कौशल से रजिनी ने उनकी और उनकी योजना की रक्षा की थी, उसके लिये वकील साहब आँखो ही आँखों मे उसे शतशः धन्यवाद दे रहे थे!

कैप्टन चारिया यह सब सुन कर अपनी 'डिजाइन' में फिर हँसे और अपने भरकम हाथों से वकील हसाब की अपेक्षाकृत क्षीण काया पीठ पर एक जोर की थपकी देकर बोले—

'तो ये क्यो नही कहते दामोदर! कि 'साइकूलीजी' और 'पैथूलीजी' में अब कुछ कराती शरांती करने का इरादा है जी! भई, हरनाम तुम इन सब बातों को समझ नहीं सकती हो! जवानी का जोश है!

जवानी में ही आदमी नाम शाम सब करना चाहता है। जवानी गई तो जोश गया! फिर वापस नही आने का!! मगर एक बात कहूँ! तुम टेढ़ा काम करने जा रहे हो! करैले का छिल्का मिले तो उसे पीस कर रोज सुबह नमक के साथ खाया करो। बडी फुरती आएगी!... मगर यह बताओ कि सुबह सुबह तुम्हारे घर का चक्कर लगाया और तुम सुब्बारंजिनी चाय का एक प्याला भी नही पूछती?'

दामोदर विष्णु घोरपड़े चट बोल उठे—

'रंजिनी, चाय कहाँ ठीक की है?'

रंजिनी ने जवाब दिया—

'चाय तो कब की लगी हुई है। आपका इंतिजार कर रहे थे। फिर यह बात छिड गई! आइए चलिये।'

रजिनी आगे आगे बढ़ीं। मिसेज चारिया अब भी कुछ चुप चाप खड़ी थी। उन्हे अब भी दाल मे कुछ काला ही नजर आ रहा था।

घोरपडे ने बात समझते हुए कहा—

'चलिए चलिए भाभी जी! आप किस चक्कर में पड़ी हुई है! यह सब आपके मतलब की चीज नही है! बस यही समझ लीजिये कि मैंने इस घर मे अपने लिये एक 'आपरेशन-थियेटर' बनवाया है। चलिये आप चाय पीजिये!' नर्मों की भाषा में वकील घोरपड़े ने अपनी बात समझाई।

मिसेज हरनाम चारिया अपना बेग सम्हालती हुई चल पडी। हँस कर बोली—

'वह तो ठीक है दामोदर जी! लेकिन अपने इस 'आपरेशन-थियेटर' से मरीज को सही सलामत निकाल लाना। जरा समझ बूझ

कर काम करना!' अपनी समझ मे उन्होने घोरपड़े के मनोविज्ञान पर एक गहरा व्यंग किया।

चाय की मेज पर बैठते बैठते उन चारो की हँसी से सारा घर गूंजने लगा। हर बात खत्म करने पर डाक्टर चारिया अपने प्याले मे 'थोड़ी और' चीनी डालने की माँग करते रहे और वकील साहब उनके बगल मे बैठे हुए चम्मच से चीनी की 'आहुति' डालते रहे। एकाएक कैप्टन चारिया ने वकील साहब से शिकायत की--

'यार! क्या बात हो गई है? अब तो तुम लोग मुद्दतो से हमारी तरफ नही आए! कहाँ पहिले तुमने अस्पताल की नीव खोद डाली थी और कहाँ अब आप दूज के चाँद हो रहे है? वकील साहब! आपको याद है कि आप औरतो के नाम से भडकते थे और अब जनाब अब चारो तरफ आपको औरते ही औरते दिखाई पडती है-- और सब कुछ आप भूल गए! अजी मेरी भी शादी हुई थी, लेकिन मैने कही आना जाना निकलना बैठना तो कभी बद नही किया। पूँछो हरनाम से! अरे मुहब्बत का धधा करने के लिये परमात्मा ने रात भर का टाइम क्या कम दे रक्खा है? क्यो हरनाम?''

मिसेज हरनाम चारिया इसे सुनकर शरमा गई। जितने टमाटर वे रोज खाती थी वे सब के सब उनके गाल मे चमकने लगे। कैप्टन चारिया ने मजाक तो घोरपडे से किया था लेकिन अपनी बेहूदी आदत के मुताबिक मिसेज हरनाम चारिया को भी उसमें सान लिया था। वे जब कभी ऐसा मजाक करते या किसी ऐसी बात का प्रसग चलाते तो किसी न किसी तरह घुमा फिरा कर, उसमें मिसेज हरनाम चारिया का नाम जरूर घुसेड लेते थे। बिना ऐसा किये, वे यही समझते थे कि उन्होने अपना पति कर्त्तव्य पूरा नही किया है।

अपनी इस आदत को वे किसी सीमा तक ले जाने मे सकोच नही करते। जब कभी वे कोई मूर्खता कर बैठते और फिर वक्त पडने पर उसका बयान करते तो साथ मे यह भी बताते थे कि उस मूर्खता के लिये मिसेज चारिया ने रात मे उन्हे कितना डॉटा फटकारा और क्या सजा दी! ज्यादातर वे यह दिखलाने की कोशिश करते थे कि वे कुछ नही है और न किसी योग्य थे! जो कुछ भी है वह सब उनकी मिसेज की ही देन है।

दामोदर घोरपड़े भी उनकी इस हरकत से पूरी जानकारी हासिल कर चुके थे। मिसेज चारिया कैप्टन साहब के ऐसे वाक्यों से सदा घबडाती थी क्योकि वे यह नही जानती थी कि किस सीमा पर कैप्टन चारिया रुकेगे! ऐसी हालत मे घोरपडे अक्सर मिसेज चारिया की सहायता बात टाल कर किया करते थे! फौरन बोले—

'नही नही यह बात नही है कैप्टन साहब! हम तो अक्सर आते ही रहते हैं! हॉ इधर आने की कुछ छुट्टी नही मिली! बात यह है हाथ मे कई ऐसे 'डिफीकल्ट केस' आ गए कि आने की फुर्सत ही नही मिली। एकाध महीने मे अब सब काम निबट जायगा। फिर आने जाने की फुर्सत मिल सकेगी। रंजिनी जी तो बराबर आती ही जाती रहती है! मै भी आऊँगा!'

'हाँ हॉ वह क्यो नही आएगी। दामोदर जी! क्या वह आपकी तरह है कि काम निकल जाने पर भूल कर भी नही झांके?' मिसेज चारिया ने अपनी मुसीबत की परवाह न करके फिर एक धक्का लगा दिया!

इस मानसिक धक्के से वकील साहब कुछ धराशायी जरूर हुए लेकिन फौरन सम्हल गए। इसका जवाब उन्होने सिर्फ एक मिनट

की लगातार हँसी से दिया ताकि सब लोग समझ लें कि वे इसे एक हँसी की बहुत बडी बात समझ रहे है !

दो घंटे बैठकर, शिकायते उलाहने देकर, हँस बोल कर, चाय पीकर चारिया दम्पति चले गए ।

कहते है कि एक ही तरह से कहानी सुनने और कहने दोनो मे दोष होता है ! इसलिये इस पाप को बचाने में आप थोडी देर के लिये मेरी मदद करें !

संध्या की अरुणाई तरु शिखरों पर जा चढ़ी है। सब ओर एक निस्पंदयुत वातावरण छा गया है। ऐसे मे, आइए पाठक हम सामने वाले घर मे चले ! अरे यह कौन है ? ठहरिये, यह तो कोई नकाबपोश दिखाई पड़ता है ! कमरे में चारो ओर धुंआ ही धुआ भरा हुआ है। शायद इसने कमरे मे आग लगा दी है ! आइए और नजदीक चले। घबडाइए नही, धीरे धीरे आइए। पग चाप की आहट न होने पाए। जरा ध्यान से देखे। हं, हं, यह तो बिल्कुल चुपचाप पडा हुआ है। शायद इस नकाबपोश की हत्या कर दी गई है ! अरे, और नजदीक आ जाइए ! आइए पाठक ! . अरे, यह तो अपने वकील साहब है ! अरे, और यह तो नकाब भी नहीं है—यह तो मोटे फ्रेम का गाढे काले रंग का धूपी चश्मा है। इसने आग भी नही लगाई है। यह तो शायद इनका सिगरेट है जिसका धुआ कमरे मे उड़ उड कर

भर गया है। आइए पाठक कान लगा कर सुनें! है! इनकी तो साँस भी चल रही है। मरे नही है! तो फिर क्या कर रहे है? आँखे भी खुली है! सोच रहे है शायद! लेकिन यह कैसे पता चले कि यह क्या सोच रहे है? इसके लिये तो बस एक ही तरकीब है! आइए, आइए पाठक! हम आप इनके दिमाग मे घुस चले?... घुस गए? बस अब आप यह जान लीजिये कि वे क्या सोच रहे है?

ठीक है। अब आप कहानी आगे सुनिये।

कमरे और छज्जे के बीच वाले दरवाजे के पास आरम कुर्सी डाले हुए दामोदर विष्णु घोरपडे बडी चिंता मे थे। आज वे सोच रहे थे कि ज्यो ज्यो वे अपने मृतप्राय रोमास को जीवित करने के लिये अपने ऊपर बधन लगाते है त्यों त्यों वह अदर से खोखले हुए जा रहे है। उन्हे लग रहा था कि उनकी चेतना अब भी पूर्ववत् ही काम कर रही है। आज सुबह ही सुबह जब कैप्टन चारिया और मिसेज चारिया आए हुए थे तब कितनी सरलता के साथ उनकी चेतना म यह स्मृति जाग उठी थी कि रंजिनी बिल्कुल उनकी पत्नी है और वे उसके पति हैं! उन्हें लग रहा था कि उनका उपचेतन जो कुछ भी संचय करके रख रहा था वह सब समय पाकर स्मृति के रूप में उद्भूत हो रहा था। यही हटाने के लिये घोरपड़े व्याकुल थे। वही हट नही रहा था। बिना यह स्मृति हटे उन्हें अपने रोमांस से वाछित फल नहीं मिल सकता था, यह भी वे जानते थे।

एक डिबिया कैप्स्टन सिगरेट वह खत्म कर चुके थे। उठ कर तकिये के नीचे से दूसरी निकाली। आकर फिर पूर्ववत् कुर्सी पर बैठ गए। इस बार उनके दिमाग में रोमांस और पशु प्रवृत्तिकी बात उठी। मानव जीवन में दूसरे सामने परोसी हुई थाली छीन लेने की जो अदम्य पशु

प्रवृत्ति रहती है वह भी रोमास मे प्रायः सशक्त ढग से आती है तभी उसके अन्य दूसरे तत्वो का पूर्ण विकास सभव हो सकता है। वे ध्यान-मग्न होकर अपनी आत्मा की आवाज सुनने की कोशिश करने लगे। उनका दिमाग घूम रहा था। समस्या सामने थी लेकिन उसका समाधान नही सूझ रहा था। जो कुछ दामोदर कर रहे थे खुद उन्हे भी उसका अत नही पता था। फिर भी आज वे अपनी आत्मा से सिर्फ अगला कदम जानना चाहते थे। वे सोच रहे थे कि यदि उन्होने भूलने की प्रक्रिया को इतना आसान बना दिया तो हरेक पति-पत्नी पुनः 'सुख के सागर मे तिरते' दिखाई पड़ेगे। घोरपड़े ने अपनी आत्मा को थोडा और कसा। सिगरेट की दूसरी डिबिया भी चे बोल गई थी। अब सिर्फ एक सिगरेट बाकी रह गई थी। सहसा उनकी निगाह सामने पडी हुई एक फिल्मी पत्रिका पर पडी। उसके मुख पृष्ठ पर एक खलनायक का चित्र था। उधर चित्र पर निगाह पड़ी और इधर उनकी आत्मा बोल उठी—

'तुम्हारे इस रोमास में, कोई भी खलनायक नही है। खलनायक ही हर प्यार को सशक्त करता है। वही रोमांस की रीढ़ है! उसमे नायक और नायिका पर जो विपत्ति पडती है, वह उन्हे प्रेम करने की अपूर्व शक्ति देती है। अपने प्रेम को सुदृढ करने के लिये हर प्रेमी को एक 'विलेन' या खलनायक खोज निकालना चाहिये!'

आत्मावादी मनोवैज्ञानिक वकील साहब, आत्मा की यह आवाज अपने मन मे गूंजती हुई सुन कर उछल पड़े। खारी सागर को मथते मथते एक मोती उनके हाथ लगा था। इतना पाते ही भविष्य उनके सामने उसी तरह मूर्तिमान हो उठा जिस तरह एक बार एम० एल०

ए० हो कर उपमत्रित्व की कल्पना साकार होने लगती है। वे छज्ज पर निकल कर घूमने लगे।

'मिल गया। राज़ तो मिल गया।' सिगरेट की डिब्बी पर अँगूठे और तर्जनी से ठुनकी मारते हुए वे बुदबुदाए—'लेकिन अब यह खलनायक कहाँ से लाऊँ?'

मनोविज्ञानी दामोदर ने खलनायकों का मनोविश्लेषण करना शुरू किया। एक जो जवान खलनायक होते है जो अपनी तरफ से हीरोइन पर मरते रहते है, अपने वैभव के बल पर हीरोइन को अँगूठी वगैरह पहिना कर माँ बाप को फँसा कर उन्ही से शादी कराने का वचन ले लेते है। इन्ही खलनायको से बेचारा नायक लडता है और अंत मे अपनी शक्ति और साहस के बल पर जीतता है। दूसरे टाइप के खलनायक, ऐसी रोमास कथा मे वे माँ बाप होते है जो अपने खानदान के नाम पर, दहेज के नाम पर, और न जाने किन किन पिटी पिटाई चीजो के नाम पर अपने लडके की शादी अमीर घराने मे करने की सोचते है और हर तरह यह चाहते है कि लड़के का बस भला ही भला हो! पहिले ढंग के खलनायको के बारे मे सोचते हुए वकील साहब ने अपने कई मित्रो के बारे मे ख्याल किया। फिर उनके तर्क ने उत्तर दिया कि औव्वल तो किसी भी मित्र से यह सब बता कर उन्हे सही ढंग से पूरी योजना समझा ले जाना बहुत कठिन है। बहुत संभव था कि वे कोई तमाशा खडा कर देते या वे सारे मानसिक अनुशासन को भूल कर यह नाटक मानने से इन्कार ही कर दें और अपनी 'प्रेयसी' को प्रेयसी ही मान बैठे!! इस हद् तक किसी भी मित्र को पास खींचने में वकील साहब को खतरे की छाया दिखाई पड़ती थी। बहुत सोच विचार करने के बाद

उन्होंने दूसरे टाइप के खलनायकों मे अपनी आस्था जमाई। इस किस्म के नायक और चाहे जो करे लेकिन 'प्रेयसी' उनकी निगाहो से तो बची रहती है और वे पुकारते वक्त उसे 'बेटी' ही कह कर पुकारते हैं। दूसरे प्रायः ऐसे खलनायक कहानी का अंत आते आते अपनी बेवकूफी समझ जाते है और जान जाते है कि उनका लड़का जो कुछ भी कह राह था वही ठीक था। तीसरे, यह खलनायक अंत में अपनी उसी बहू के हाथों से खाना खाते हुए और परम प्रसन्न होते हुए दिखाई पडते है जिसे वे कुछ दिनों पहिले गालियाँ दिया करते थे। कुछ खलनायक अपवाद जरूर होते है जो अपनी ही अक्ल पर विश्वास करके लडके को एक बार घर से बाहर निकाल देने में भी नहीं चूकते और साथ-साथ अपनी जायदाद से भी वचित कर जाते है!! किंतु ऐसे खलनायक भी मरते वक्त अपने बेटे को बुलाकर एक हाथ से वसीयत नामा उसके हाथ में पकडाते है और लडकी बुलवाकर दूसरे हाथ से लड़के के हाथ मे हाथ पकडवा देते है। फिर वे कहते है 'बेटी मुझे माफ करना!' फिर वे मर जाते है। फिर लोग रोते है। फिर शादी हो जाती है! इसी प्रकार के खलनायक से उनका कार्य सिद्ध हो सकता था!

सिगरेट की नयी डिबिया का नम्बर आ गया। अब समस्या और भी कठिन हो गई थी। अब समाधान का समाधान ढूंढना था। सिगरेट जला कर उन्होंने फिर अपने दिमाग को चूसना प्रारंभ किया। घोरपड़े के माँ बाप पहिले ही बिदा ले चुके थे। होते भी तो क्या करते, इस बारे मे दामोदर को पूरा विश्वास नही था। अब खलनायक किराए पर लेना होगा। सबसे पहिले स्वाभाविक ढंग से कैप्टन चारिया और मिसेज चारिया का नाम सामने आया। पर उनका ध्यान आते

ही घोरपड़े का दिल बैठने लग गया। सहायता की बात तो दूर, यदि कैप्टन साहब को यह पता चला तो हरी तरकारियों के एक झाबे के अलावा और कुछ हासिल नही होगा, यह दामोदर सोच रहे थे। आज सुबह ही उनका जो रुख था, उसे देखते हुए चारिया दम्पति खलनायकों का पार्ट कतई नही करेंगे, यह तै था!

फिर आखिर कौन हो?

नागपूर मे घोरपडे के एक दूर केचाचा तारघर मे तारबाबू थे। उन्हे कुछ दिनों के लिये काशीवास के बहाने बुलाया जा सकता है। घोरपडे उन्हे उसी क्षण पत्र लिखने बैठ गये। थोड़ी दूर खत लिख कर वे ठहर गए। उन्हे बडी निराशा हुई। जब वे ही उन्हे बुला रहे थे तो भला उनके चाचा किस तरह उनके खलनायक का पार्ट कर सकते थे? समझाने से मनोविज्ञान का इतना सूक्ष्म विश्लेषण और यह तजुरबा उनकी मोटी बुद्धि मे नही घुस सकता था! तब फिर बुलाने से ही क्या लाभ? यही सोचकर उन्होने खत लिखना बद कर दिया। इससे उल्टे विघ्न ही पड़ सकता था और उनकी साधना टूट सकती थी।

कई नाम सामने आए। सब की कमियाँ सामने आती रही। नाम ऊपर उठते रहे और वकील साहब उन्हे सेकेंड की सुई की तरह खट खट पीछे छोड़ते चले गये। वे ऐसा नाम चाहते थे जो उनकी योजना को सफलता की ओर ले जाय। वे कुछ असाधारण ढग से सोच रहे थे!

इतना दिमागी समुद्र-मंथन करने के बाद उनके चेहरे पर मुस्कराहट आई। वे कपड़े पहिनने लगे। थोड़ी देर में वे बाजार की तरफ बढ़ गए।

बाजार पहुँच कर वे उस दूकान पर रुके जहाँ नाटक के लिए तरह

तरह की रंग बिरंगी दाढ़ी, जटा, मूंछें और कपड़े मिलते थे। छाँट-कर वकील साहब ने टैगोर-स्टाइल की लम्बी शुभ्रधवल लहराती हुई मूंछदार दाढ़ी निकाली। साथ मे एक गेरुवे रंग की जटा भी खरीदी। नाटक मे जिस तरह की दाढ़ी और जटा दुर्वासा ऋषि लगाए घूमते हैं, यह ठीक उसी तरह की थी।

दामोदर घर लौट आए। कमरे में कद्दे-आदम शीशे के सामने उन्होंने दाढ़ी मूंछ और जटा लगा कर देखा। वे खिल उठे। उनका चेहरा बिल्कुल अपने पिता के चेहरे से मिल गया था। अपने मौलिक मस्तिष्क से वकील साहब ने समस्या का समाधान खोज निकाला था। उन्होंने तै कर लिया था कि वे स्वयं ही अपनी इस रोमांस कथा मे खलनायक का पार्ट करेंगे। जिस मानसिक-अनुशासन के द्वारा वे यह भूलने में समर्थ हो जाते थे कि वे पति नहीं बल्कि प्रेमी हैं, उसी तरह उन्होने सोचा कि वे कुछ देर के लिए दामोदर विष्णु घोरपड़े को भूल कर विष्णु पांडुरग घोरपड़े हो जाया करेंगे!

०

सात

अगर कोई हमेशा खुश रहने की कोशिश करता रहे तो दूसरे लोगो से देखा नही जाता, ऐसा सुना गया है। दूसरे की पिटाई कुटाई, छंटाई, निदा, प्रपच सब कुछ देखा सुना जा सकता है—एक सिर्फ नही देखते बनता तो वह है दूसरे का सुख! अगर चार आदमियो में से तीन को शक पड जाय कि उनमें से चौथा सुखी है तो फिर बाकी तीनों का यह पुनीत कर्तव्य हो जाता है कि वे यह ढूंढें कि उसके हाथ ऐसा कौन सा पारस पत्थर लगा है जिससे वह सुखी होने का सपना देख रहा है। जैसे ही यह पता लग जाय तैसे ही उन्हे अपनी समस्त विद्या से उस पारस पत्थर को सिल बटखरा साबित करने से नही चूकना चाहिए। यही अक्ल की असली परख होती है। जो अक्ल के कच्चे और खोपड़ी के औधे होते है वे इन 'ठगों' के बहकावे में आकर बछड़े को गधा का बच्चा समझ कर फेंक देंगे। उस समय उन तीन ठगो मे से एक उसे फिर ले भागता है। अब शेष तीनों का कर्तव्य हो जाता है कि वे हाथ धोकर उसके पीछे पड़ें और उसे मूर्ख प्रमाणित करें! चक्र ऐसे ही चलता रहता है।

उस दिन कचहरी से जब वकील साहब लौटे तो बहुत अनमने से दिखाई पड़ रहे थे। बात वही थी। उनके साथ काम करने वाले वकील यूं भी घोरपड़े के मनोविज्ञान से भड़कते थे! उस दिन बार-एसोसिएशन में यह चर्चा चल रही थी कि सरकार उन्हें इसी काम

के लिये इटली भेज रही है। न सिर्फ इतना बल्कि दिल्ली से आर्डर चल चुका है और अब आने ही वाला है! उडानेवालो ने यहाँ तक बात उडाई कि खुद घोरपडे ने ही इटली का नाम सरकार को सुझाया है! मजाक बनाने के पीछे जो खास चीज मनोविज्ञानी घोरपडे मानते थे वह थी जलन की, ईर्ष्या की, डाह की प्रवृत्ति!! उस दिन खाली वक्त मे वकील साहब के तथाकथित दोस्तों ने उनका दो घंटे तक मजाक बनाया। हल्के फुल्के मजाक के अलावा घोरपडे मजाक से दूर ही रहते थे! वे कहते थे कि इस तरह के मजाक कहने सुनने से आदमी के अवचेतन पर बुरा प्रभाव पडता है और उसमे पशु-प्रवृत्ति के अवाछित अश जागते है! मजाक ही मजाक मे उन्होने जब यह सुना कि दिल्ली से आने वाले हुक्मनामे में उनकी बीबी ने जोर लगाया है, तो उनकी कँपकँपी छूट गई! एक ही दो वार मे वह ची बोल गए। सजीदा हो गए। जिस मौन को वे विरोध के रूप मे रखना चाह रहे थे वह मित्रो ने 'हवास-गुम' के रूप मे लिया। नतीजा यह हुआ कि घर आते आते उनका दिमाग सुन्न पड गया था और वे एकदम अनमने हो गए थे।

घर आकर वे चुपचाप चारपाई पर पड़ गये। सैकडो छूटे हुए अनार जैसे मजाकिया वाक्य उन्हे परेशान कर रहे थे। नशा उतरने पर जितनी तकलीफ नही होती, उससे कही ज्यादा तकलीफ मजाक हो जाने और उसे झेल जाने के बाद होती है। रग रग टूटने लगती है। बडा 'डिप्रेशन' आ जाता है। सारी दुनियाँ बेकार और नीरस दिखाई पडने लगती है। जब तक उसका मारक न समझ मे आ जाय तब तक वह काँटे की तरह करकता रहता है। चारपाई पर लेटे ही लेटे उन्होने हाथ बढाकर खिड़की खोल दी। जब वे आए थे तब

सामनेवाले घर की खिड़की बद थी लेकिन अभी अभी वह खुल गई थी। सहसा उन्हे याद आया कि उसी दिन उस लडकी के साथ उन्हे 'सेकेंड-शो' में एक सिनेमा देखने जाना है । इतना याद आते ही वे लपक कर बिस्तर पर मे उठ बैठे। दिन भर की घटना उनके दिमाग मे उतर कर उनके उपचेतन मे चली गई!!

झुट पुटा काफी हो चला था। उन्होने कमरे की बत्ती जलाकर उजाला किया। एकाएक बिजली की तरह एक साथी का किया हुआ मजाक उनके सामने कौध गया! मगर उन्होने अपने मन पर सयम कर लिया था। उन्होंने सोचा कि जिस विराट व्यक्तित्व के निर्माण की बात वे सोच रहे है वह इस तरह की छोटी छोटी बातो पर ध्यान देने से नही पूरी हो सकती है। यह सारे विरोधी तत्व तो सामने आयेगे ही! इन्ही पर तो बाहरी जगत मे जय पानी होगी! वे रात के कार्यक्रम को पूरा करने के लिये तैयार होने लगे।

बिजली के 'हीटर' पर कटोरी मे पानी गरमाया। हजामत बनाने का सामान ला रक्खा। शाम वाली हजामत जल्दी से बनाई। तौलिये से अपने गाल पोछे फिर एक नेबू को दो टुकडो मे काटकर एक एक टुकडा एक एक गाल पर रगडना शुरू किया। नेबू से गाल रगडना उन्हें डाक्टर चारिया ने बताया था । नेबू रगडने के बाद 'वैनिशिंग क्रीम' उँगलियों में भर कर उन्होंने हल्के हाथो से गालो पर थपकियाँ देना चालू किया। थोडी देर मे उसे भी उन्होने चेहरे के साथ मिला दिया। इसके बाद तौलिये से उन्होंने अपना मुह थप-थपाया गोया क्रीम को उन्होने और कस कर चिपका दिया। अपने बालो को वकील साहब ने किसी खास दवा के प्रयोग से बादामी बनवा लिये थे! उन्हें अक्सर धोकर वे बिना तेल लगाए ही छोड

देते थे ! इससे उनके बादामी रंग के बाल झटका खाते ही बिखर उठते थे जिसे वे बात करते करते बड़ी अदा के साथ धीरे से सँवार दिया करते थे। देखने वालों को लगता था कि ये बाल अक्सर यूँ ही गिर पड़ते होंगे और वकील साहब उन्हे यूँ ही उठा दिया करते होंगे किंतु उनमे से एक भी यह नही जानता था दामोदर घोरपड़े बालो को कैसे उस खास स्थिति मे लाते थे कि वे उस समय वैसा ही गिरे जैसा वे चाहते हों, और फिर वे अपनी 'सेट' अदा में सिर को जरा तिरछे झटका देते हुए उन्हे ऊपर उठा कर फेक दें। इस वक्त भी उन्होने अपने बालों मे हल्का सा 'शैम्पू' किया और फिर बिना तेल लगाए वैसे ही छोड दिया ताकि वे लटें अपने समय पर गिरे और फिर यथा समय उठ जायँ !

चेहरे की सारी तैयारी कर चुकने के बाद वकील साहब ने अपने कपडे निकाले। शाम के रंग से मैच करता हुआ उन्होने एक सूट निकाला। खुले कॉलर का कोट वकील साहब कम पहिनते थे। अक्सर वे उसके साथ रेशमी मफलर से गला ढँका करते थे। सूट पहिन कर शीशे के सामने खडे हुए। देखा। कुछ जमा नही। फिर एक बंद कॉलर का कोट निकाला। शीशे के सामने फिर खडे हुए। इस बार और भी भद्दा लगा। बुजुर्गो वाला यह बद कॉलर का कोट पहिन कर रोमांस करने के लिये जाना, यह विचार मात्र उसे उतरवाने के लिए मजबूर करने लगा। हार कर वह कोट भी उन्होने उतार दिया। अंत मे उन्होंने एक नई सिलवाई हुई शेरवानी निकाली। सुरमई रंग की यह शेरवानी अपनी तबीयत का रंग था ! ढीली मोहरी का एक पैजामा और सुरमई रंग की शेरवानी पहन कर उनके मन को कुछ सतोष हुआ।

जो जाड़े की शाम थी, वह देखते देखते जाड़े की रात हो गई। सर्दी काफी थी। नया साल इस बार भयानक सर्दी लेकर आया था। घोरपड़े तैयार हो रहे थे कि आठ बज गया। अर्लाम घड़ी बोलने लगी। दामोदर जब कभी अपने रोमांस संबंधी कार्यक्रम पर जाया करते थे तो पूर्व सूचना देने के लिए घड़ी में हमेशा अर्लाम लगा दिया करते थे! इससे चूक होने की संभावना बहुत कम रहती थी। वे तैयार होकर निकलने ही वाले थे कि उनके दिमाग में विचारों की एक बिजली चमकी!

वे कमरे के कोने तक गए। इल्मारी में से दाढी मूँछ और जटा निकाल कर लगाई और फिर शीशे के सामने आ गये। अपनी आवाज को भरसक भारी और बेहूदा बनाकर डाटते हुए उन्होने पूछा—

'ऐसी सर्दी मे इस बेवक्त कहाँ जाने की सूझी है दामोदर?

उसके बाद एक क्षण का मौन। अर्थात् दामोदर चुप है!

'मै पूछ रहा हूँ, आखिर कहाँ जा रहे हो? क्या मुह में जबान नही है?'

तब उन्होंने दाढ़ी उतारी और धीमे स्वरो में कहा—

'कुछ नही पिता जी! जरा....'

इसी बीच दाढ़ी लगा कर वे फिर गरजे—

'जरा क्या होता है? ऐसी सर्दी में जान फालतू है क्या?'

इसके बाद वे दाढ़ी उतार कर चट बोले—जैसे उनको जवाब सूझ गया—

'कुछ नहीं पिता जी, मेरे एक मित्र दिल्ली से कलकत्ते जा रहे हैं।

उनका तार आया है। उन्ही से मिलने के लिये स्टेशन जाना है।... मिल कर वापस आ जाऊँगा।'

यह सुनकर वह दाढी मूँछ लगाकर, कुछ कमर झुका कर कमरे के उसी कोने तक खखारते हुए गए और बडबड़ाए--

'अजीब सनक है आज कल के लौडों की! सरदी इतनी पड रही है..फिर भी बाहर घूमे बिना जान निकली जा रही है! हुँ! हुँ हुँ!!'

पूरी उपेछा के साथ हुँ हुँ! की ध्वनि करते हुए उन्होंने किनारे की खूँटी पर वह दाढी मूँछ और जटा टाँग दी। फिर एक मुस्कान फेकते हुए आहिस्ता से दरवाजा वद करके वे बाहर निकल गये कि किसी को कानोकान खबर न हो!

इस नए प्रोग्राम से और नए पात्र के आने से घोरपड़े को कुछ नया रस आने लगा। कभी जब लौटते और ज्यदा देर हो गई होती और दाढ़ी मूँछजवाब तलब करती तो वे 'एक्सीडेंट', 'लेट',आदि तमाम बहाने बता देते या कभी कभी शीशे के सामने आँख नीची करके पूरी डाट सुन लेते थे। इस प्रकार वे अपना खोया हुआ मानसिक सतुलन फिर से प्राप्त कर रहे थे। सामने वाली खिड़की में से 'मिस' सुब्बारंजिनी अब भी सहयोग देती रहीं।

दाढ़ी मूंछ अपने उत्तरदायित्व के प्रति पूर्ण रूप से सजग थी। वह देख रही थी कि उसका लड़का इश्क के चक्कर में पड़ कर बेकार होता जा रहा है! धीरे धीरे दाढ़ी मूँछ ने यह पता लगाया कि इस

सारे मामले मे सामने वाले घर की लड़की का बहुत बडा हाथ था। दाड़ी मूँछ ने यह सारी बाते उसी मुहल्ले के एक बनिये से पता की। आखिर उसने इसका शमन करने की बात सोची।

शाम को पाँच बजे के आस पास गेरुवा वस्त्र पहिने हाथ मे कमडल और चिमटा लिये, दाढी मूँछ जटाधारी एक बाबा जी ने सुब्बारजिनी के दरवाजे पर दस्तक दी।

'हर हर शकर! बम भोला! माता! कुछ भिक्षा दे तेरा कल्याण होगा!'

थोडी देर बराबर बाबा जी के चिल्लाने के फलस्वरूप दरवाजा खोल कर सुब्बारजिनी बाहर निकली। बोली—

'कौन है?'

बाबा जी आगे बढ़ कर बोले—

'बम शंकर! बेटी! तू इतनी उदास क्यो है? तेरे ललाट की रेखाएँ बता रही है कि तू तो बडी भाग्यवान है! परन्तु फिर भी तेरे मुख पर प्रसन्नता नही है। ..क्या तुझे पति-सुख नही है?'

बाबा के इस कदर सहानुभूतिपूर्ण दृष्टिकोण को देख कर रजिनी चौकी।

'नही बाबा नहीं! बात कुछ नही है! ऐसे ही...'

तब तक बाबा जी फिर बोले—

'नहीं बेटी! मैं अपने योग से देख रहा हूँ। तेरा पति जीवित है किंतु उसे कुछ मानसिक रोग है। तुझे संतान न होने का दुख है?

चिता न कर बेटी। समय पाकर सब दुख दूर हो जायगा। ले यह भभूत! शकर जी का नाम लेकर खा ले। सब चिता दूर हो जायगी।'

बाबा जी ने एक चुटकी भभूत की निकाल कर दी और दाढी मे हाथ पोछ लिया। दाढ़ी पर हाथ फेरते ही उन्हे अपना उद्देश्य याद आ गया।

'बेटी! तू भी उसी मानसिक रोग मे ग्रस्त हो रही है। मेरी बात यदि तू माने तो यह स्थल छोड़ कर तू कही और रह! तेरा रोग दोख सब शकर भगवान दूर कर देंगे। तुझे सच्चा सुख मिलेगा और भगवान भोलानाथ ज्ञान देगे। मै अपने योग से देख रहा हूँ कि तेरा यह संकट दूर हो जायगा।'

रंजिनी इतनी ही देर में बाबा जी के योग से बहुत प्रभावित हो गई थी। दो सेर आटा लाकर बाबा जी की झोली मे डाल दिया। दरवाजा बद हो गया। बाबा जी की अपूर्व वेशभूषा देख कर मुहल्ले के लडके आस पास इकट्ठा हो गये थे। एकाएक दाढी बाँधने वाला तार टूट गया और बाबा जी की दाढी गिर पडी। लडको ने एकदम यह अजूबा देख कर जोरों का हल्ला मचाया। बाबा जी गिरी हुई दाढी को समेटते हुए दूसरी तरफ भागे। लडको ने पीछा किया। आस पास के लोग और दूकानदार 'लकड सुधवा आया, पकडो पकडो जाने न पाए' का शोर मचाते हुए बाबा जी के पीछे दौडे। मुहल्ले के कुत्ते भी भौ भौ कर पीछे लगे। बाबा जी को दाँतो पसीना आ गया। हर ओर भागते हुए, बीसियोजानी अन जानी गलियो का चक्कर काट कर किसी तरह गजानन चौधरी के घर पहुँचे।

गजानन चौधरी ने वकील साहब को इस वेश मे कभी देखा नही था। थोडी देर तक पहिचाना नही इसलिये बड़ी बेरुखी से पूछा—

'कहिये! किसे चाहते है?'

जटा दाढी उतारते हुए घोरपडे बोले--

'अरे यार कुछ नही! जरा एक फैन्सी ड्रेस का आज रिहर्सल किया तो बडी झझट में पड गया। लाओ एक धोती कुर्ता दो तो पहिन कर घर लौटूं।'

गजानन चौधरी की उत्सुकता जागी। किसी तरह वकील साहब ने अपनी वकालती विद्या का सहारा लिया और इधर उधर की बातें बता कर उनकी जिज्ञासा शात की। गजानन चौधरी ने उन्हें धोती कुर्ता तो दे दिया लेकिन उनके मन में एक अजीब सा कौतूहल अब भी नाच रहा था! आखिर वकील साहब ने यह गेरुवा बाना क्यों पहिना? इसमें कोई मनोवैज्ञानिक रहस्य जरूर होगा लेकिन वह क्या है, यह उनकी समझ में लाख कोशिश करने पर भी नही आया!

बाबा जी का सारा 'मेकअप' का सामान एक गठरी में बाँध, गजानन चौधरी का कुर्ता धोती पहिन, घोरपडे अपनी इस हरकत के बारे में सोचते हुए घर लौटे! घर पहुँचते पहुँचते मुहल्ले के तमाम परिचितों ने उनसे कहा--वकील साहब! आप कहाँ चले गए थे? आज तो इस मुहल्ले में एक लकड सुघा आया था? बडी मुसीवत है! अब तो बच्चो को खुला छोडना मुश्किल है! आप कम से कम इस बात की खबर कोतवाल साहब को तो कर दीजिये! पता नहीं किधर से वह भाग निकला। दौडाया तो हम लोगों ने बहुत था मगर किस्मत का तेज था! निकल गया।'

घोरपड़े जी कुछ घबड़ाए। कोतवाल तक खबर जायगी तो बवाल होगा। उन्होंने आश्वासन देते हुए कहा--

'आप लोग फिक्र न कीजिये। मैं सब कह सुन दूँगा। आप इसकी चर्चा इधर उधर मत कीजिये। मै ठीक कर दूँगा।'

घर आए और कोने की खूँटी पर दाढी मूँछ टाँग दी।

दामोदर घोरपडे को अपने रोमासयुत तजुरबे में पूरी आस्था थी। वे समझ रहे थे कि उसका निश्चित ही प्रभाव होगा। वे रोज अपने सूट और अपनी शेरवानियाँ बदलते थे। दिन में दो बार हजामत बनाते थे। तरह तरह के जूते बनवाते थे और कमर कस कर इश्क लडाते थे। वे अपनी तरफ से मस्त हो जाने की पूरी कोशिश कर रहे थे।

पिछले तीन चार दिनो से मुहल्ले मे उस 'लकड़ सुघे' वाली घटना को लेकर काफी तहलका सा मचा हुआ था। घर की औरतो ने अपने बच्चो को शाम होते ही घर के बाहर निकलने से मना कर रक्खा था। आस पास के लोग उसी लकड सुघे की चर्चा करते। कोई कहता कि ये लकड सुंघे बच्चो को पकड ले जाते है और उन्हे तेल के जलते कड़ाह पर उल्टा टाँग देते है। बच्चों के सिर मे फिर छेद कर देते है जिससे बच्चो का दिमाग तेल में गिर पड़ता है। उसी की दवा बनाते है। कोई कहता कि लकड़ सुघे बच्चों को पकड कर ले जाते है और उन्हे बेच देते है। वकील साहब के कान में ज्यों ज्यों ये बाते आती त्यों त्यो वे बहुत घबड़ाते!

सात

उस दिन सुबह छः सात बजों ही उनकी आँख खुल गई। उठे और उठकर शहर से बाहर की तरफ घूमने चल दिये। इस 'लकड़ मघवा' अफवाह को वे दबाना चाह रहे थे मगर उनकी भरसक कोशिश के बावजूद भी वह दब नही रही थी। यही सोचते सोचते वे पेट्रोल की टंकी तक पहुँच गए । सामने 'मोबिल आयल' का एक बडा सा इश्तहार लगा हुआ था। एकाएक उनके मनोवैज्ञानिक दिमाग को कस कर झटका लगा। उन्हे लगा कि वे खुद आदमी नही है। वे मशीन है। ऐसी मशीन जिसमे समय समय पर प्रेम करने के लिये विभिन्न तरह का पेट्रोल डालना पडता है। सिर्फ पेट्रोल से ही काम नहीं चलता, उन्हे [illegible] का मोबिल आयल भी डालना पडता है ताकि गाडी चिकनाहट से चले ! उन्हे सारा व्यवहार, नीरस, वाहियात और चमत्कार-हीन लगने लगा ! मनोवैज्ञानिक के सामने एक बड़ा भारी सवाल आ गया ! आदमी या मशीन ? आदमी का दिमाग मशीन बनने की तरफ !! घोरपड़े तो मानव मन और उसकी प्रवृत्तियो की बात उठाते थे ! भला आदमी का मशीन हो जाना वे कैसे सह सकते थे ! अगर मानव मन सिर्फ मशीन होकर रह जायगा तो उनका उद्देश्य ही हार जायगा !!

घोरपडे को यह सब सोचते सोचते तैश आ गया। वे वापस लौट पड़े। अबकी उनके कदम तेज पड़ रहे थे। वे तैश में थे। उनको कुछ भी समझ मे नही आ रहा था। उनके कानों में यही भनभनाहट आ रही थी—'तुम मशीन हो ! तुमने रोमांस को मशीन बना दिया !' मुहल्ले में वे वापस आ गये। सहसा अपने ही द्वारा लगाए गए सारे बंधनों को वे तोड़ फोड़ कर सुब्बारंजिनी के घर में घुस गए और पुकारने लगे—

'रंजिनी ! रंजिनी ! !'

ऊपर के कमरे में बैठी हुई रजिनी बहुत दिनो बाद अपने आँगन मे यह आवाज सुन कर चकित हो गई ! जब से यह दौर शुरू हुआ था तब मे वह अधिकतर ऊपर के ही कमरे मे रहती थीं और सामने वाली खिडकी से मन बहलाया करती थी ! वह मुस्कराती हुई कमरे के बाहर निकली और धीरे धीरे जीने से नीचे उतरने लगी।

'क्या हुआ ? क्या बात है ? आज कैसे भूल पड़े घोरपड़े जी ?'

'घोरपडे जी वी कुछ नही ! मै तुमसे एक बात पूछने आया हूँ।

'वह क्या ?'

'बात सुनो। बीच मे मत काटो। मैं पूछना चाहता हूँ कि आखिर यह हम और तुम जो इतनी बड़ी साधना कर रहे हैं, अपने शरीर को गला रहे है, यह सब क्या इसीलिये कि आदमी मशीन बन जाय ! क्या हम और तुम रोमास करने वाली मशीन है ? क्या इसी के लिये यह सब किया गया है ?'

रंजिनी ऊपर से ही सिगरेट की डिबिया लेकर उतरी थीं। घोरपड़े की तरफ बढ़ाते हुए बोली—

'लीजिये। बैठिए। अभी चाय बना लाती हूँ। तब आगे कुछ बात चीत होगी।'

आँगन में पडे हुए दो मोढ़ों में से एक को खीच कर दामोदर बैठ गए। चाय आ गई। चाय का प्याला घोरपड़े के हाथों में पकड़ाते हुए रंजिनी बोलीं—

'हाँ अब कहिए ! क्या कहना चाहते थे आप ?'

'मै सोच रहा हूँ कि आखिर क्या हम सिर्फ मशीन बन कर ही

रह जायँगे ? क्या इसी तरह उस विराट व्यक्तित्व का निर्माण होगा ? अगर हम पशु हो जाते तो भी भला ही होता लेकिन हम जड और निर्जीव मशीन होकर क्या करेंगे ? इस सबसे कुछ बनता दिखाई नही पड़ता !' स्पष्ट ही वकील साहब के स्वरो में सिगरेट और चाय पीने से अब कुछ कोमलता आ गई थी।

'अब बताती हूँ। आप तो उस वक्त बहुत तैश में थे न ! किसी लिये मै भी नही बोली !'

वकील साहब अपने इस बेतुके तैश की बात सुनकर कुछ झेंप गए। कहा—

'बात यह है कि आखिर क्रोध भी तो संवेग ही है न ! तुम तो जानती होगी, गुर्दे के ऊपर 'एड्रिनल ग्लैण्ड्स' होते है। उनसे जब 'एड्रलीन' निकलने लगता है तब क्रोध उत्पन्न होता है ! इसमें इसी का क्या ? ... क्या कहूँ ? तैश आ ही गया !'

रंजिनी उनके जवाब पर कुछ हँस पड़ी। फिर उनकी गंभीर मुद्रा देख कर स्वयं भी संयत स्वरों में बोली—

'देखिए ! बात यह है कि हमने ठीक से अपने इस रोमांस कार्यक्रम को नही चलाया। हमने उसे कल्याणकारी स्वरूप नही ग्रहण करने दिया। हमारे क्रिया कलापों से रोमांस का वह तत्व नहीं पनपने पाया जो हमारे रोमांस को अधिक सुंदर, सुदृढ और सशक्त बनाता है, जो हमारी प्रीति में हमारी आस्था को और भी दृढ़ करता, जो हमें अंधकार में भी विश्वास दिलाता ! जैसा फ्लोरेंस नाइटिंगेल ने कहा था.....'

'क्या है वह तत्व ?' मनोवैज्ञानिक पंडित अपने ज्ञान को चुनौती मिलते देख कर बोल पड़े !

'वह तत्व है 'विरह'! बिना 'विरह' के हमारा प्रेम विकसित ही नही हो सकता है। बिना विरह के रस नहीं आता। जब तक चीज सामने रहती है तब तक हम उसका महत्व नही जान पाते। लोग सामने से हट जाते है तो उन्हे श्रद्धांजलियाँ मिलती हैं! विरह ही प्रेम भाव का सीमेन्ट है। विरह के बिना कोई भी नायक या नायिका अपने मनोवाछित प्रेयसी प्रियतमा को प्राप्त नही कर सका। मैंने तो सभी उपन्यासो मे पढा है कि विरह का होना बडा ही आवश्यक है!' इस बार रजिनी समझा समझा कर बोल रही थी।

दामोदर बोले--

'यह जो अलग अलग मकान लेकर रह रहा हूँ, यह विरह नही तो और क्या है? अपने शरीर को तुमसे अलग रख कर, अपने को तुमसे, तुमको अपने से दूर रख कर यह जो अपनी काया को, जला रहे है, गला रहे है, यह विरह नही तो और क्या है?'

रंजिनी ने कहा--

'यह विरह नहीं! यह तो मन बहलाव है। पास पास बगल बगल न रहे, आमने सामने रहे। हर वक्त हम और आप एक दूसरे को देखते रहते है! हर शाम एक दूसरे के साथ गुजारते है ही! और चाहिए भी क्या? इसी से हमारे संयोग वृत्ति की तृप्ति हो जाती है और हमारा असली विरह नही जग पाता है।'

'तो फिर तुम्हारी समझ से असली विरह क्या है?' अंततः घोरपड़े ने जिज्ञासा की।

'असली विरह वह है जिसमें नायक या नायिका रेलगाड़ी, हवाई जहाज या जहाज से कहीं दूर चले जायँ! तभी वह असली दूरी होती है। ऐसी कोई भी दूरी जो रिक्शे ताँगे, इक्के या साइकिल से

हट सकती हो, वह असली विरह नही जगाती। उसमें तो अपनी ही इच्छा पर मिलना और न मिलना निर्भर करता है। हमारे सामने न तो हमारी विवशताएँ ही जोर कर पाती हैं और न हमारी सीमाएँ ही बाधा बनती है। रेल पर चढ कर चाहे एक ही स्टेशन क्यों न जाना हो लेकिन उसका ध्यान मात्र हमारी सीमाओं को हमारे सामने खडा कर देता है। ऐसी ही स्थिति मे वे तत्व विकसित होते हैं जो कुल मिला जुला कर 'विरह' का निर्माण करते हैं! हमें उन्ही तत्वों को जगाना चाहिये।'

एकाएक रजिनी से ऐसी अप्रत्याशित ज्ञान चर्चा सुनकर वकील साहब विस्मित रह गए। उन्हे न सिर्फ आश्चर्य हुआ बल्कि अपनी ही दिये हुए उपन्यासो और सस्ती पत्र पत्रिकाओ की सफल ट्रेनिग पर वे अत्यंत पुलकित हो गये। बोले—

'तो क्या अब मै कही और जाकर वकालत शुरू करूँ? इसमे तो 'टाइम' भी लगेगा और बेकार ही शक्ति और धन का बड़ा अपव्यय होगा!' इसी समय वकील साहब को बार एसोसिएशन मे अपने सहयोगियों द्वारा किये हुए मजाक याद आ गये। एक बार उनके मन में आया कि उन्हे बनारस से बाहर चला ही जाना चाहिए! मगर फिर रुक गये। तब तक रंजिनी ने बात आगे बढ़ाई—

'नही इसकी जरूरत नही होगी। बनारस से तुम्हारे हटने से बेकार एक तमाशा खड़ा होगा। मै ही कुछ दिनों के लिये बाहर हो आऊँ तो अच्छा रहेगा!'

'लेकिन कहाँ?'

'इलाहाबाद के कमला अस्पताल में मेरी एक सहेली है। उसने मुझे बुलाया है। सोचती हूँ वही कुछ दिन को चली जाऊँ! अस्पताल

का भी कुछ काम ले लूँगी। आसानी से कुछ दिनों रह जाऊँगी। जब हमारा वियोग पूर्ण विकसित हो जायगा तब मैं तुम्हारे कहने से या लिखने पर वापस चली आऊँगी! अपने तजुरबे को पूरा करने के लिये यही एक चारा है!'

वकील साहब मौन हो गए। बात तो समझ में आ रही थी लेकिन बनारस से रंजिनी के इलाहाबाद जाने की बात उनको खल रही थी। सोच रहे थे कि यदि अ की कोई असली ससुराल होती तो वे रजिनी को वहाँ भेज कर आसानी से अपने दोनों के अदर विरह जगा सकते थे! जीवन में आज पहिली बार उन्हें बीवी के माय के का महत्व समझ में आया। वे यह भी समझ रहे थे कि शादी के बाद बीबी को माय के क्यों जाना चाहिये। बुजुगों ने औरतों की बिदा के लिये कुछ समय इसीलिये पूर्व निश्चित कर रक्खे थे। डाक्टर चारिया के यहाँ भेजने से न तो बात ही बनती और न रंजिनी की इच्छा ही पूरी होती! रिक्शे, ताँगे या साइकिल से हट जाने वाली दूरी, भला विरह कैसे जगाती? दामोदर अपने ही जाल में उलझ गए।

उनकी उलझन देखकर रंजिनी फिर बोली—

'आप फ़िक्र न करें। मैं अपना प्रबंध कर लूँगी। कृष्णमाधव जी से एक बार मैंने सुना था कि उनके एक मित्र इलाहाबाद में रहते हैं। मैं उनके साथ भी ठहर सकती हूँ। फिलहाल तो मैं अपनी सहेली के ही साथ ठहरूँगी। हमारी पुरानी दोस्त है। हम लोगों ने साथ साथ ट्रेनिंग पास की थी। इस बीच आप भी यहाँ अच्छी तरह विरह जगा सकते हैं। हमे खूब प्यारी प्यारी चिट्ठियाँ भेजिएगा। मैं भी

आपको वहाँ से पत्र लिखा करूंगी! आप देखिएगा कितना मजा आएगा!'

सब कुछ सुन लेने के बाद अब वकील साहब के सामने राजी होने के अलावा और कोई चारा न था। वे एक ध्येय के लिये ही कष्ट उठा रहे थे! अपने तजुरबे से वे सब को चौका देना चाहते थे। चौकाने के लिये, ऐसा कुछ त्याग करना आवश्यक ही था। यह तो एक तपस्या थी! क्या करते? मृतप्राय रोमास के पुनर्जीवन और उसके स्थायित्व के लिये वे अंततः राजी हो गये।

'ठीक है। अच्छी बात है।' कह कर वे उठ खड़े हुए।

चौथे दिन रजिनी का बिस्तर अपने ही हाथो से बाँधकर इलाहाबाद जाने वाली गाडी पर मनोवैज्ञानिक दामोदर उन्हे भारी मन, और गीली पलको के साथ बिठा आए।

अब वे अपने अदर विरह जगाने को तैयार हो गए।

०

आठ

उधर सुब्बारंजिनी की गाडी छूटी और इधर घोरपडे विरह मे मछली की भाँति तडपने लगे। जीवन प्रेरकशक्ति के हट जाने पर सूना सूना हो गया। फिर भी वे जानते थे कि यदि प्रेरक के बिना वे प्रतिक्रिया को चलाते रहे तो एक दिन उनका मनोविज्ञान प्रेरक को उनके मन माफिक बना देगा। इसीलिये उन्होंने प्रेरक पर नही वरन् प्रतिक्रिया अर्थात् 'विरह' पर जोर देना शुरू कर दिया।

सबसे पहिला काम तो उन्होने यह किया कि सामने वाला मकान छोड दिया। वे अपने असली मकान में वापस आ गये। उन्होंने सोचा कि इस मकान मे ही रह कर वे अपनी प्रियतमा की याद भली भाँति कर सकेगे। हर समय याद ताजी होती रहती थी और हर क्षण वे रंजिनी के स्पर्श का स्पदन महसूस करने की कोशिश करते थे। वकील साहब ने अपना घर इस ढग पर सजाया कि उनका विरह अधिक जाग्रत हो सके! अपने कमरे से उन्होंने वे सभी चीजें हटा दी जो उनको संयोगी क्षणों की याद दिलाते थे। कमरे के बीचोबीच दीवार पर रंजिनी की एक बड़ी सी फोटो फ्रेम करके उन्होंने ला टाँगी। उसके ऊपर वे रोज ताजे गुलाबों की एक माला चढ़ाते और उसके पास दो अगर बत्ती सुलगाते! नीले परदे बदल कर उन्होंने हल्के गुलाबी रंग के कर दिये ताकि कमरा उन्हे हर समय अंगारे की भाँति संतप्त किया करे। काशी के एक कलाकार को वकील साहब किसी तरह

चिरौरी मिन्नत करके बुला लाए और उन्होने उनसे दीवारो पर दो भीतचित्र बनवाए। एक चित्र मे यह दिखाया गया था कि एक पेड पर दो जोडे बैठे हुए कलोल कर रहे है और एक कोने मे एक अकेला पछी उनको देख कर सिर झुकाए बैठा हुआ है। दूसरा चित्र था—तीन क्रमबद्ध चित्रो का एक पूरा चित्र। पहिले मे एक ठूँठ दिखाया गया था, दूसरे मे उस ठूँठ पर आकर एक कोयल बैठी हुई दिखाई गई थी और तीसरे मे वह कोयल उस ठूँठ से उडकर जाती हुई दिखाई पड रही थी। ठूँठ के तने मे दो डरावनी आँखे बनाई गई थी जिनमे से दो बडे बडे आँसू चू रहे थे। अक्सर वकील साहब टकटकी बाध कर उनको देखा करते थे।

कमरे का दृश्य यथासंभव बदल दिया गया। रजिनी जिन चीजो को खरीद कर लाई थी वे सब इस्तेमाल से अब अलग हो गई थी। उनको 'म्यूजियम पीस' की तरह घर की शीशेदार आलमारी में सजा दिया गया था। वकील साहब जब बहुत विह्वल हो जाते थे तो उस अलमारी को खोलते थे—कभी खाना बनाने वाली करछुल को कलेजे से लगा कर गरम गरम साँसें छोडते तो कभी बुनाई करने वाली सलाइयो को चूम चूम कर लम्बी फूत्कार छोडते और फिर उठ कर कमरे मे लगी तस्वीर के पास चले जाते और अपने आप उससे बुदबुदाते। इस तरह वे अपने अदर कातर वातावरण उपस्थित करके विरह जगाने लगे।

परन्तु मनोवैज्ञानिक घोरपडे यह समझते थे कि मात्र वाह्य वातावरण किसी का जीवन दृष्टिकोण नही बदल सकता जब तक वह व्यक्ति स्वय अपने मानसिक अनुशासन से अपनी विचारधारा को बदलने की चेष्टा न करे। दामोदर इसके लिये भी चिंतित थे।

मुहब्बत मनोविज्ञान और मूँछ दाढी

सुब्बारंजिनी के वियोग मे उनका जी उचट गया। किसी काम मे उनका मन न लगता। अपनी तरफ से तो सूख कर काँटा भी हो जाना चाहते थे मगर बस नही चलता था! चाँदनी रात मे उनको डर लगता था। बाहर नही निकलते थे। चाँदनी रात को वे ऐसी नागिन समझने की कोशिश करते जो डँस कर उल्टी हो गई है। कभी रात में तारा टूटता तो वह बेचैन होने लगते! उन्हे यह सुधि नही रह जाती कि वे क्या कर रहे है। सिनेमा देखने जाते तो एक ही तस्वीर के कई 'शो' देख डालते!! घर लौटते तो अकेले मे सिनेमा के गीत गुनगुनाते और जी बहलाते! बार बार मन भर आने पर वे आँसू बहाना चाहते थे। मगर हर बार आँसू साथ नही देते थे। इसके लिये उन्होने प्याज के अर्क और ग्लैसरीन का सहारा लिया। वकील साहब हर अवसर पर जरूरत के मुताबिक आँसू गिराते थे। कही सिर्फ हल्की सिसिकियो से ही काम चल जाता था और कही धारा प्रवाह रोना होता था। हर मौके के लिये उनके पास प्रबंध था। अगर वक्त पर उनकी आँखो से आँसू न निकलता तो वे अपनी आत्मा के सामने अपने को आप दोषी ठहराते। वे अपनी निगाहों मे स्वय दोषी न हो इसके लिये उन्होंने प्याज के अर्क का सहारा लिया।

फरवरी का महीना आ गया था। खुर खुराहट पैदा करने वाला तथा कथित 'मलयानिल' चलने लगा था। उस दिन बसत था। वकील साहब बसंत की टोह कई दिन से लगाए बैठे थे। उन्हे भी पता था कि बसत के दिन खास तौर से वियोग कस कर चढ़ता है। इसीलिये वे भी बसत के जादू के लिये तैयार थे।

सुबह से उठकर उन्होंने पहिला काम यह किया कि नौकर को

आगाह कर दिया कि कोई भी आए तो उसे 'साहब नही है।' कह कर वापस करो! दूसरा काम उन्होने अपना कमरा सजाने का किया। कमरे मे खूब धूपदीप जलाया। खुशबू की। फिर बिस्तर पर लेट कर 'ओह ओह' करते हुए उन्होने तकियो मे मुह छिपा लिया। हाथ बढा कर प्याज के अर्क वाले रूमाल को आँखो के पास कर लिया। एक तकिया जब भीग गई तो दूसरी उठाई! सहसा दरवाजे पर थप थपाहट सुनाई पड़ी। झट से उठकर लाल गटापारचे का चश्मा लगा लिया। आज सुबह से ही वे यह चश्मा लगाये हुए थे क्योकि वे कमरे की सभी चीजो को अंगारो की भाति वियोग मे जलती हुई देखना चाहते थे और उसके लिये दूसरा कोई उपाय नही था। दरवाजे पर बोलती हुई आवाज को उन्होंने पहिचान लिया था। परमभक्त कृष्णमाधव जी थे। मगर नौकर ने आने नही दिया। 'साहब नही है।' का जवाब दोहरा दिया।

दिन भर वकील साहब का बहुत उदासी मे कटा। उन्मन उन्मन, खोए खोए, बेसुध बेसुध वे अपने आँगन मे टहल रहे थे। सहसा डाकिये ने आवाज दी। लपक कर वकील साहब ने दरवाजा खोला। डाकिये ने घोरपड़े के हाथ मे एक नीला लिफाफा रख दिया। लिफाफे से मोतिया इत्र की महक आ रही थी। मोतिया इत्र घोरपडे को पसंद है, यह रंजिनी को छोड़ कोई दूसरा नही जानता था। काँपती निगाहों से वकील साहब ने देखा उस पर रंजिनी के हाथो की ही लिखावट थी। डाकिया आगे बढ़ गया था। उसे उन्होने फिर बुलाया और एक चवन्नी इनाम दी। वह चकित होकर बोला—

'बाबू जी खत बैरंग नही है। ठीक है! महसूल पूरा लगा हुआ है।'

नही नहीं तुम ले जाओ। तुम्हारे लिये है यह!' एकाएक दामोदर को कँपकँपी सी आ गई।

डाकिये ने कुछ प्रसन्नता और आश्चर्य से चवन्नी जेब में डालते हुए अपना रास्ता पकडा।

वकील साहब ने दरवाजा बंद कर लिया।

चुपचाप अपने कमरे में चले गए। तकिये के नीचे वह खत दबा दिया फिर लेट कर बेचैन होने लगे। एकाएक साहस करके उन्होने वह खत निकाल लिया। लिफाफा बहुत सम्हाल कर एक कोने से फाड़ा। लिफाफे के अंदर एक नीला कागज भी था। दामोदर ने देखा, हाँ सुब्बारंजिनी का ही खत था। बस उन्होंने खत लिफाफे सहित अपनी छाती से चिपका लिया। हाथ बढा कर तकिये के नीचे रक्खा हुआ रुमाल भी उन्होंने निकाला।

हर तरह से लैस होकर अब उन्होंने खत पढ़ना शुरू किया। लिखा था:

मेरे प्राण प्यारे,

तुमसे दूर होकर मैं कितनी बेचैन हूँ, यह मैं ही जानती हूँ!

इतना पढते ही उन्होंने खत को फिर कलेजे से लगा लिया।

कहना न चाहिये कि इस वक्त तक वे तकिए के नीचे रक्खे हुए रुमाल का उपयोग कर चुके थे! थोडी देर सुबकियाँ लेकर उन्होंने आगे पढना शुरू किया:

मेरे जीवनधन! आखिर यह हमारी तुम्हारी दूरी कब दूर होगी! मेरी यह वियोगअग्नि कब शात होगी? हाय! क्या जीवन में इसीलिए प्यार मिला है कि हम मिल कर बिछड जायँ? क्या उस परमात्मा की आँखो मे प्यार का कुछ भी मूल्य नही है?.. (याद रखिए कि इस बीच मे वकील साहब हर वाक्य के बाद अपना रुमाल इस्तेमाल करते जा रहे है!!) उफ! यह आसमान हम पर कैसी मुसीबत ढा रहा है!

यहाँ तक पढते पढते तो उन्हे सचमुच वाली रुलाई आ गई। इस बार उन्हे रुमाल को जरूरत नही पडी। उनके मानसिक अनुशासन ने अबकी उनकी सच्ची मदद की। उन्हे लगा कि जैसे सचमुच कोई बडी भारी दूरी हो गई है। वह यह भूलने में समर्थ हो गए कि यह दूरी उन्ही की उपज है!! बार बार खत आगे पढने की कोशिश करते थे लेकिन उनकी आँखे हर बार डबडबा जाती थी। अक्षर धुधले पडते जाते थे! वे समझ नही पाते थे कि आगे क्या लिखा हुआ है। घोरपडे ने चिट्ठी फिर तकिये के नीचे डाल दी और चुपचाप पड गए। जब तक उनका मन शात नही हो जाता, तब तक वे चिट्ठी आगे नही पढेगे, ऐसा उन्होने निश्चय कर लिया। थोडी देर बाद मन से तो रुलाई आनी बद हो गई लेकिन आँखों मे प्याज का असर कुछ कुछ बाकी था। काफी देर तक रद्दी म्यूनिस्पिलटी के पाइप की तरह उसमें से पानी रसाता रहा। थोड़ी देर मे उन्होने खत को फिर निकाला। अबकी अपना दिल कडा करके वे इस बार

पर तुल गए कि वे खत को पूरा पढ कर ही दम लेंगे। आगे के वाक्य पढे :

अब तो यह व्यथा झेली नही जाती ! तुम कैसे हो, लिखना। मेरी याद कभी आती है या इतनी जल्दी ही भूल गए निष्ठुर ? (यहाँ तक पढते पढते उनकी आँखो का पाइप फिर उस तरह से बहता जिस तरह कभी जाडे की भोर मे ज्यादा दबाव से पानी ज्यादा मिलने लगता है—क्योकि उस वक्त उसका इस्तेमाल कोई दूसरा करने वाला नही होता है !) तुम मेरे लिए बहुत परेशान न होना। मै यहाँ किसी न किसी तरह अपना दिल बहला ही लूँगी। तुम खुश रहना नही तो मै भी यहाँ रोती ही रहूँगी !

तुम्हारी ही बिसराई

(अगले खतो मे कभी कभी ठुकराई भी !)

—रजिनी

पत्र पढ कर थोडी देर के लिए तो वकील साहब यूँ पडे रह गए कि जैसे वे अपने आप को यह समझा रहे हो कि वे मूर्च्छित हो गए है।

थोडी देर बाद वे उठे। अपने आप को स्वस्थ चित्त बनाया। फिर अपना नया खरीदा हुआ लेटर पैड उठा लाए। उसमे मोतिया इत्र लगाया और फिर फाउन्टेन पेन लेकर खत लिखने बैठ गए। 'मेघदूत' पढ़ पढकर वे प्रेमालाप के बहुत से तरीके जान गए थे !

बहुत देर तक उनके सामने यह समस्या रही कि वे रजिनी को क्या लिखे ! उनको न यह समझ मे आ रहा था कि वे उसे किस प्रकार संबोधित करे और न यही कि वे अगर सबोधित करके खत भी लिखे तो क्या लिखें। अंत मे उन्होने बहुत कुछ सोच विचार कर लिखा :

मेरी प्रियतमा !

फिर बाद मे समझे कि यह तो सब कोई लिखता होगा अतः उन्होने इसको काट दिया। इसके बाद उन्होंने पचीसो संबोधन लिखे और उन्हें किसी न किसी कारणवश काट फेका। अततोगत्वा 'मेरे प्राणो की प्रेरणा' लिख कर उनको कुछ सतोष हुआ। फिर तो आगे चिट्ठी का मजमून जोर कर गया। उन्होने चटपट लिखा :

तुम चली गई हो तो ऐसा लगता है कि जैसे पिजरे से तोता उड गया है, खाली पिजरा पडा हुआ है ! तुम चली गई हो तो ऐसा लगता है कि प्राण निकल गया, शरीर पडा हुआ है, तुम चली गई हो तो ऐसा लगता कि कैदी छूट भागा है लेकिन जेल अब भी उसी तरह बना हुआ है ! तुम्हारे जाने के बाद मेरा मन बार बार यही कहता है कि मै कही जाकर डूब मरूँ ! जीवन का अब मेरा कोई लक्ष्य नही रह गया है, लेकिन बार बार तुम्हारा प्यारा मुखड़ा मुझे याद आता है, बार बार अपनी वे रस भरी चाँदनी रातें याद आतीं है। हर रोज उन अँधेरी गलियो को देख देखकर अब भी मै आठ आठ आँसू रोता रहता हूँ ! तुम मुझे छोड कर चली गई हो तो

इतना लिखते लिखते घोरपडे फफक फफक कर रोने लगे ! उनकी आँखो मे जैसे अबकी नियाग्रा प्रपात फूट पडा। आगे उनसे बहुत देर तक नही लिखा गया। दो दिन यही हाल रहा। जब वे चिट्ठी लिखने बैठते तब उनको मजबूरन उठना ही पडता था और चिट्ठी पूरी नही हो पाती थी। इस तरह जब कई अवसर निकल गए तो बेचारे दामोदर ने बड़ी मेहनत से किसी तरह वह चिट्ठी पूरी की और उसे डाकखाने में डाल दिया।

घोरपड़े विरह-व्यथा से लोटने लगे। उनका अतर व्याकुल हो गया। कभी कभी तो वे दो तीन दिन तक घर से बाहर कदम नही

निकालते थे। घर के भीतर ही पडे रहते और शून्य दृष्टि से आकाश की ओर निहारा करते। फिर कभी जब घर से बाहर निकलते तो सुबह से शाम हो जाती लेकिन उन्हें घर की याद भी न आती! वे खोये खोये से सब ओर घूमा करते। हर दूकान को वे इतनी तन्मयता से देखते हुए निकलते कि दूकानदार को लगता कि बस वे अब किसी चीज की फरमाइश करने ही वाले हैं लेकिन दामोदर उन दूकानों की तरफ देख कर भी सचमुच कुछ नही देखते थे! वे खोये खोये ही रहते थे, ऐसा वे महसूस करने की कोशिश करते थे। मुह मे सिगरेट दाबे दाबे वे जब दूकान झाँकते चलते तो उनके मुख पर एक अजीब सी करुणा, एक अजीब सी विगलित भावना, एक अजीब सी मुस्कराहट, एक अजीब सा व्यग, एक अजीब सा अविश्वास, एक अजीब सी श्रद्धा, एक अजीब सी कुठा, एक अजब सी बेवकूफी मिली हुई दिखाई पडती थी! यद्यपि वे अब अपने मित्रों मे पहिले से कुछ अधिक रुचि लेने का अभिनय करने लगे थे किंतु फिर भी अपनी आदत के अनुसार वे उनको काट जाने मे ही अधिक सुख का अनुभव करते थे।

उस शाम को जब घोरपडे दशाश्वमेध घाट पर एक किनारे बैठे हुए, अनमने मन से सिगरेट पीते हुए एक भजन गाने वाले को देख रहे थे तो एक अजीब टुइयाँ सी आवाज ने उनका ध्यान अपनी तरफ खींचा—

'जरा माचिस दीजिएगा भाई साहब!'

वकील साहब ने अपनी निगाह उठाई तो एक अत्यंत काला कलूटा बौना, काले रंग का ही सूट पहिने अपनी बत्तीसी निकाले

हुए सामने खडा दिखाई पडा। अनमने रहने के बावजूद भी वे अपनी हसी उस वेशभूषा को देख कर रोक न सके। बौने ने फिर पूछा—

'माचिस नही है क्या? जरा सिगरेट ही दे दीजिए अपनी बीडी जला लू।'

वकील साहब ने दियासलाई दे दी। बौना भी वही पास सीढ़ी पर बैठ गया। बातो का सिलसिला चलाते हुए वह ताबड तोड़ पूछने लगा—

'यही रहते है? रोज आते है? क्या करते है? 'आदि

उसी सिलसिले मे वकील साहब को पता चला कि इस बौने का नाम गुलाब चद 'सिरीवास्तो' था और वह कवि था। वह काशी का पुराना रहने वाला है और किसी अखबार मे काम करता था। अपनी कारगुजारी का बयान करते करते बौने सिरीवास्तो ने बताया कि वह किस तरह पढ़ाई से अपना जी चुराता था। फिर बीस साल की उम्र मे वह अखबार का शहरी सवाददाता हो गया और फिर पचीस साल की उम्र मे वह तरक्की करता हुआ खेलकूद संवाददाता, फिर फिल्मी आलोचक, फिर बच्चों के कॉलम का लेखक फिर अब वह उसी अखबार मे उपसंपादक हो गया था। गुलाबचंद ने बताया कि वह शहर के एक एक कोने से परिचित है और वकील साहब का नाम सुनकर उसने ऐसा लपक कर हाथ मिलाया जैसे वह इन्हें बरसों मे जानता रहा हो।

'तो आप कविता भी लिखते हैं?' दामोदर ने जिज्ञासा की।

'हाँ हाँ सैकड़ों 'कबिता' लिखता हूँ। मूंड़न शादी ब्याह से लेकर अपने मन की 'बेदना' सब पर कबिता लिखता हूँ। मेरी कबिता आपने पढी नही क्या?'

'नहीं मै तो नही पढ सका ! अखबार हिदी का कम देख पाता हूँ। लेकिन साहब आप अखबार मे काम करते है और कविता भी लिख लेते है, यह तो कमाल की बात है !'

'कमाल ? हाँ कमाल ही समझिए ! बात यह है कि 'जूनियश' तो हर जगह चमकता है चाहे वह अखबार मे हो और चाहे भाड झोके! (घोरपड़े को पता चला कि बौना हमेशा 'जीनियस' को 'जूनियश' ही बोलता है और उसे कोई दुरुस्त करने का साहस नही रखता !) मेरी कविता तो सभी सहयोगी अखबारो मे छपती है। 'कासी' के सभी 'कवि सम्मेलनो' मे जाता आता हूँ।'

कवि से भेट होने पर मनोवैज्ञानिक वकील को बडी प्रसन्नता हुई। वे कवि और कविता को एक मनोविकार और ग्रंथियों का उच्चाटन मानते थे लेकिन अपने तजुरबों को पूरी तरह जॉचने का अवसर नही मिल पाया था। इस व्यक्ति से मिल कर इसीलिये उन्हे बड़ी खुशी हुइ। साथ ही यह बौना गुलाबचद अखबार में भी काम करता था और दामोदर अखबार को मानवजीवन का अभिन्न अंग मानते थे, इसलिए आकर्पण का यह एक कारण और भी था। गुलाबचंद दोस्ती करने मे बड़े उस्ताद थे। उँगली पकड़ते ही पहुँचा पकडते थे। सो उन्होने वकील साहब का भी पहुँचा पकड लिया। नतीजा यह हुआ कि रोज काशी के घाटों पर वे मिलते और गुलाबचंद उन्हें दस पाँच कवितायें सुनाता।

दो परिचितों के बीच यदि कही एक सूत्र मिल जाय तो उनको घनीभूत मित्र बनते देर नही लगती। बातचीत के ही दरम्यान गुलाबचंद ने बताया कि वह एक लड़की को दिल से चाहता है मगर वह लडकी इतनी निर्मोही है कि पलट कर उसकी तरफ नहीं देखती! वह

शायद गुलाबचद का रूप रग नही पसद करती। गुलाबचद ने बताया कि किस तरह उसने अपनी 'कबिताये' उसी के प्रति लिखी है और कैसे मौका निकाल कर उस तक वह 'कबिता' गुलाबचद ने पहुँचवा दी! उधर घनिष्ट मित्र समझ कर घोरपडे ने भी उन्हे अपना हाल बताया। वे एक दूसरे को ढाढस देते और इस प्रकार उनकी दोस्ती कल्पवृक्ष की भाँति बढती चली गई।

मन से मन मिल जाने पर घोरपड़े को बड़ी राहत मिली। फिर भी उन पर विरह का प्रभाव स्पष्ट ही था। इधर गुलाबचद की मित्रता ने भी दामोदर पर अपना रग दिखाया। उन्होने अपनी मेज पर तमाम प्रेम गीतो की किताबे खरीद कर ला सजाई। धीरे धीरे उनकी मेज पर सिर्फ कविता की ही किताबे दिखाई पड़ती थी। उन पर दामोदर ने खूबसूरत अक्षरो मे अपना नाम लिख छोड़ा था। जब वे कमरे मे अकेले होते तो वे वियोग गीत चिल्ला कर गाते और उससे उनको वही शाति मिलती थी। गुलाबचद की बात पर इसी लिये उनकी आस्था और भी दृढ़ हो गई।

रजिनी जी के खत इस बीच उसी तरह से आते और घोरडे उतने ही प्रेम के साथ अपने पत्रो का उत्तर देते थे। इसके लिए वे एक पुस्तक ही ले आए थे जिसमे विवाहित लोगो को प्रेमपत्र लिखने की तमाम हिदायतें लिखी हुई थी। अतएव उन्हे संबोधन लिखने में तो नही किंतु पत्र मे क्या लिखे, इसके बारे मे अब भी कभी कभी बडी कठिनाई पडती थी।

दामोदर जी चूंकि अचेतन पशु प्रवत्ति से भी मानवमन परिचालित मानते थे, इसलिए उन्हें धीरे धीरे यह लगा कि इस वियोग में सबसे बडी बात यह हुई है कि उनकी पशु प्रवृत्ति इधर बढ़ रही है। उन्होने

सोचा कि इसकी रोकथाम किसी न किसी तरह जरूरी है अन्यथा, इसके चक्कर में पड़कर वे अपनी सारी साधना, सारी तपस्या एक दिन भंग कर डालेंगे। सोच विचार करते हुए खोये खोये से दामोदर अपनी अजीब सी मुख मुद्रा बनाए, अपने अजीब ढंग से किसी तरह फिर उस शाम घाट के किनारे आए।

गंगा की लहरों को नवमी का चाँद अपनी किरनों से जैसी चुटकी काट रहा था, वह किसी भी प्रेमी जीव के लिए अद्भुत टॉनिक हो सकती थी! थोडी देर तक अपनी सुध भूलकर घोरपडे वही खड़े रहे। एकाएक किसी ने उनके कंधे पर हाथ रख कर पूछा—

'कहिए! वकील साहब! आज कुछ जल्दी चले आए इधर?'

पलट कर देखा तो गुलाबचंद 'सिरीवास्तो' थे। दामोदर बोले:

'हाँ कुछ जल्दी ही चला आया। कहिए, आप भी आज खाली हैं क्या?'

गुलाबचंद ने बताया:

'चाँदनी आज बेहद अच्छी लग लग रही थी सो मैं अपने एक दोस्त को कह कर यहाँ चला आया हूँ। बात यह है कि सभी जानते हैं कि 'कबिता' करने वाले लोग चाँदनी को बेहद पसंद करते हैं!'

घोरपड़े ने बहुत दिन बाद, उस दिन गंगा में नौका बिहार का प्रस्ताव किया। गुलाबचंद ने अनुमोदन किया और दूसरे ही क्षण वे लोग नाव पर बैठे हुए शिवशंभु की नगरी में गंगा की लहरों और चाँद की किरनों का मजा लेने लगे।

नाव चल रही थी, सहसा गुलाबचंद ने छेड़ा—

'आज बहुत उदास हो यार! क्या बात है?'

दामोदर ने जवाब दिया—

'कुछ नही दोस्त!' गरम सॉस लेकर आगे बढे, 'अब तो यह सारा ग़म नही सहा जाता! सोचा कई बार कि थोडी सी पी ही लिया करूँ। शाम को पी लूँ तो रात को बड़े मजे में सुध बुध खोकर, उसी मे डब कर अपना गम ग़लत कर लिया करूँ! जब तक यह चेतना बाकी रहेगी, तब तक वही चीजे याद आती रहेगी! रंजन का क्या ठीक, कि वह कभी लौट कर भी आएगी?' उनके स्वरों मे ठीक वही मन्द्र सप्तक का 'खड़ज' बोल रहा था, जो ऐसे मौकों पर फिल्मो के हीरो अपने गले से निकालते है!

गुलाबचद के अदर जो सबसे बडी विशेषता थी, वह यह कि उनके पास एक झोले मे सब तरह की, सब अवसरो के लिए, सब आदमियो के लिए, सलाहे भरी रक्खी रहती थी। जब कभी किसी को जरूरत पडी तो वे लोगो को उसी तरह सलाह मुफ्त में दे दिया करते थे जैसे हिन्दुस्तान का हर आदमी दूसरे को बीमार देख कर हमेशा एक मफ्ती नुस्खा बता देता है! लेकिन जिस तरह नुस्खा बताने पर भी हिन्दुस्तान के बहुतेरे लोग बीमार ही दिखाई पड़ते है उसी तरह स्वय गुलाबचंद भी उन सलाहों पर कभी काम नही कर पाते थे। वे कहते थे कि यदि वे अपनी सलाह पर खुद काम कर जाते तो आज वे इतने बडे आदमी हो गए होते कि फिर दूसरों को सलाह देने के लिए वे उपलब्ध ही न हो पाते!

गुलाबचद ने अपनी पतलून की 'क्रीज' को जरा ठीक करके गंभीर स्वर बना कर कहा—

'भाई, बात तो ठीक कहते हो! मै भी तो इसी मुसीबत का मारा हूँ। कभी कभी पहिले सोचता था—लाओ इसी को पी कर अपना ग़म ग़लत कर डालूँ! लेकिन मुझे तो एक बड़ा अजीब तजुरबा हुआ!'

घोरपडे ने जिज्ञासा की—

'वह क्या ?'

'जिस तरह लोग पीकर उसी के रंग में डूब जाते है। उसी तरह मैने तो 'कविता में वही आनंद पाया। पहिले मै 'कविता' नही करता था। मै तो सिर्फ संवाददाता ही था लेकिन क्या करूँ, मुसीबत की मार ऐसी पडी कि बस 'कवी' हो गया। वह जो मेरी कविता 'इस पार मिलूँ या कि उस पार सजनियाँ !' जो तुमने सुनी है, वह मैने इसी तरह की एक घटना को लेकर लिखा था। वह कविता बडी चली। ज्यों ज्यो वह चली त्यो त्यो बडा रस मिला। बस ये समझो कि उसी मे डूब गया !'

घोरपड़े सदा गुलाबचद की कद्र इसीलिए करते थे कि वे अखबार मे काम भी करते थे और साथ ही साथ कविता भी करते थे ! मगर यह सलाह उनके किसी काम नही आ सकती है, ऐसा समझ कर वे बोले :

'हाँ, भाई ठीक है तुमने तो कविता करके अपना सारा दुख, अपना सारा गम भुला दिया लेकिन मै तो यह कर भी नहीं सकता। मुझे तो कविता आती भी नही ! पढ भले ही लूँ लेकिन लिखना तो बडा मुश्किल है ! वह तो सीखना पड़ेगा ! ! लेकिन मन में जिस तरह की ऊहापोह मची हुई है, वह भला सीखने भर का मौका कहाँ देगी ?' दामोदर के स्वरों मे निराशा बोल रही थी।

अब 'गुलाबचद' की चिर-जागृति, सतत-सहायक-बुद्धि चेती। तत्काल बोल उठे—

'नही भाई, ऐसा निराश होने की जरूरत नही है ! अब वह पुराने जमाने लद गए जब सीख सीख कर कविता की जाती थी !

अब तो बस मन में अगर भाव उठने की कोई भी गुजाइश दिखाई पड़े, या न भी दिखाई पड़े, तो भी बडी आसानी से 'कवी' बना जा सकता है!'

घोरपडे टुकुर टुकुर ऐसा देख रहे थे गोया वे अपनी मुक्ति का प्रवचन सुन रहे हो! उनके मुख पर जिज्ञासा ही न थी; उसमे श्रद्धा, भक्ति और विश्वास की भावना भी एक एक करके उतरती चढती थी! बौने 'सिरीवास्तो' ने आगे बताया—

'तुम नई-कविता के 'कवी' हो जाओ!'

'यह नई क्या है?' जैसे घोरपडे के मुह से स्वत: फूट पड़ा।

गुलाबचद कुछ हँसे। फिर समझाने पर उतारू हो गए।

'नई कविता नही जानते हो? सब कुछ अब नई-कविता है! तुम जो कुछ लिखोगे, वह सब नई कबिता मानी जायगी। नई कबिता लिखने के लिए सबसे अच्छी बात तुम्हारे लिए यह है कि तुमको न तो छद सीखना होगा, न पिगल रटना पड़ेगा। एकाएक कल सुबह उठोगे तो देखोगे कि तुम 'कवी' बने बैठे हो!'

'अच्छा?' घोरपडे जी इतने सरल नुस्खे की कल्पना भी नही कर सकते थे!

'हाँ हाँ! तुम्हें कुछ भी नही करना होगा! बस अपनी कबिता मे, अपने मनोविज्ञान के कुछ कडे कडे शब्द कुछ ऊट पटाँग बातें—जिनका एक लाइन से दूसरी लाइन तक कोई मतलब न निकले, और दो चार पेटेंट शब्द जैसे आस्था, कुंठा, विस्थापित, स्थापित, अहं, समिधा, बार बार दोहरा कर इस्तेमाल करना! अब कबिता का वह युग नहीं कि आप हृदतंत्री, मन की वीणा, टूटे सपने, अधूरे प्राण, निष्ठुर संसार आदि का इस्तेमाल करके 'कवी' बने! अब तो बस

वही 'आस्था' और 'कुंठा' पर जोर रखना! भई, तुम तो खुद मनोवैज्ञानिक हो, तुम समझ सकते हो कि और क्या क्या नई चीजें इसमें कहाँ कहाँ से खोज कर भिडा सकते हो! मै तो सिर्फ 'जुर्नलिस्ट' हूँ!' गुलाबचंद मुस्कराए। 'जूनियश' की तरह उनका 'जुर्नलिश्ट' भी अपना विशेष उच्चारण था जिसे सुनने के लिए दामोदर जी के कान काफी अभ्यस्त थे।

घोरपड़े को अब भी सुनने के 'मूड' मे पाकर गुलाबचद ने अपना भाषण जारी रक्खा :

'एक बार इसका मजा चख लोगे तो दामोदर! देखोगे कि कितना रस मिलने लगेगा। आप वह वाली पीना भूल जायँगे! बड़ा सस्ता नुस्खा है। प्रतिष्ठा भी मिल जायगी और हो सकता है कि आत्मसतोष भी मिल जाय। अखबार में उन कविताओं को समय समय पर छपवा देना, मेरे ऊपर छोड़ दो! मै सच कहता हूँ कि नई कविता चाहे तुम्हे आए या न आए लेकिन तुम 'नए कवी' जरूर मान लिए जाओगे! बहुत मुमकिन है कि मनोविज्ञान के अंदर जो काम तुम नही कर पाए, वह इसी के सहारे कर निकलो!'

वकील साहब के सामने उनका भविष्य फिर कुछ कुछ धुध पड़ कर दिखाई पडने लगा था। वे इस धुध को चीर डालना चाहते थे।

नाव से उतरते उतरते ही उन्होंने कविता के तमाम शब्दों को एक कागज पर लिख लिया ताकि वे उन्हे भूल न जायँ। आज जिस तरह उन्हे गुलाबचंद ने अपूर्व गुरुमंत्र दिया था, उसके लिए वे अत्यंत पुलकित और कृतकृत्य थे। वे यह भी सोच रहे थे कि यदि वे सचमुच 'सिरीवास्तो' से न मिले होते तो निश्चित ही वे एक दिन शराब पीकर पतन के गड्ढे मे गिरे पाए गए होते!

नौ

बनारस के मनोविज्ञान शास्त्री उर्फ वकील साहब एकाएक आँख झपते ही नई कविता के कवि हो गए। कुछ नई कविताओ की बानगी देखी और कुछ कवियो से दोस्ती की, कुछ मनोविज्ञान की किताबो को उल्टा पल्टा, बस उन्हे नई कविता के कवि होते देर न लगी !

कवि बनने के चक्कर मे पडकर उन्हे अपने विरह ज्वर को कुछ एक दिनों के लिए थोडा दबाना पड गया। वे अधिक समय तक अपने घर के भीतर रह कर न तो स्पदन महसूस कर पाते थे और न वे अब उस फोटो से ज्यादा बात ही करने का समय निकाल पाते थे। दामोदर को सहसा यह बात भी समझ में आई कि से इस नई कविता के सहारे भी कुछ 'अनकॉमन' (असाधारण !) प्रयोग कर सकते है और इससे भी वे चमक उठ सकते है !

परमभक्त कृष्णमाधव जी घोरपडे की इस हरकत से बहुत चिंतित हुए। वे अब भी उसी तरह आते जाते रहते थे लेकिन इस बीच 'गुलाबचद सिरीवास्तो' को अक्सर बैठा हुआ देख कर वे उठकर चले जाते थे। कृष्णमाधव जी अब तक जिस घोरपडे नामक वस्तु पर अपना एकाधिकार समझे बैठे थे उस पर जिस तरह गुलाबचंद ने उनके दृष्टिकोण मे 'डाका' डाला था, वह उन्हें कतई पसंद नही आया था। अक्सर जब मौका मिलता था तो वे घोरपड़े को यह समझाने की चेष्टा करते कि यह 'सिरीवास्तो' अच्छा आदमी नही है। वे बताते

थे कि यह आदमी अपनी अखबारी बिरादरी में बदनाम है और इसकी सोहबत अच्छे आदमियो की नही है। कृष्णमाधव जी को यह भी बडी भारी चिंता थी कि वह आदमी कवि है और हो सकता है कि घोरपडे को बरबाद कर दे! इसके लिए वे समझाते:

'कवियो से दूर की राम राम अच्छी होती है! नजदीक आने पर उनकी बीमारी दूसरों को भी लगती है! यही नही ऐसी भी बहुत सी चीजे पता लगने लगती है कि हमारी श्रद्धा उनकी उन रचनाओ से भी हट जाती है जिनको हम उनके परिचय के पहिले बडे प्रेम से पढते रहते है! दोनो ही हालतो मे कवियो से दोस्ती करके आदमी पाता कुछ नही, बराबर खोता ही जाता है!!'

घोरपडे जी कहते.

'नहीं नही! तुम समझते नही हो! उसमें ऐसी खराबी की कोई बात नही है। वह तो भला आदमी लगता है। फिर कविता करना तो कोई बुरी बात तो नही है! जानते हो मनोविज्ञान मे कहा गया है कि दूसरों की सहानुभूति का शोषण करने के लिए कविता से बढिया और कोई माध्यम नही है!'

बहरहाल, परम भक्त कृष्णमाधव जी इस बहस मे थोडी देर के लिए उलझते जरूर लेकिन वह किसी भी तरह से यह मानने के लिए तैयार न होते कि कवि अच्छाआदमी होता है। वे दलील मे बराबर यह कहते कि शहर के अनेको कवियों से उनका परिचय है और वे जानते है कि वे सब के सब मन के बडे छोटे, स्वार्थी और दिमागी तौर पर निम्न स्तर के है!! घोरपडे को यह सब विश्वास करने को जी नहीं चाहता था क्योंकि उनकी चीजें गुलाबचंद अखबार मे

छपवाता रहता था। अत मे हर तरह से हार कर कृष्ण माधव जी ने खुद अपने आप को ही समेट लेने का निश्चय किया।

कविता का चक्र स्वीकार करने के बावजूद भी इधर घोरपडे के मन मे यह बात बराबर जोर से उछलती रही कि उनके वियोग का रस परिपाक शीघ्र ही होना चाहिए ताकि वे अपने चमत्कारिक प्रयोग को संसार के समक्ष घोषित कर सकें। इलाहाबाद-प्रवासिनी सुब्बा-रजिनी के नाम वे प्रतिदिन रात मे एक पत्र लिखने का नियम बनाए हुए थे। यहाँ से जब वे छः सात पत्र भेजते थे तो वहाँ से चार पाँच पत्र आ जाते थे। अनुपात यही रहता था।

रोज खत लिखने के कारण घोरपडे को कुछ कुछयह कठिनाई होती थी कि वे कहाँ तक प्रेम के विषय मे लिखते रहे। दस बारह पत्रो मे यह लिखने के बाद कि 'मै विरह मे मरा जा रहा हूँ। मै रो रहा हूँ। मै गा रहा हूँ। मै तुम्हारे बिना जी नही सकता! (यद्यपि जी रहा हूँ—मरने की हिम्मत नही!!)आदि आदि,। उन्हे यह समझ मे आ गया कि अब इस तरह काम नही चल सकता। उन्होने अपने खत-लेखन मे कई नए प्रयोग किए।

अक्सर जब वे खत लिखते तो उसमे कतई प्रेम व्यापार का जिक्र न करते। किसी खत मे तो सिर्फ बनारस के घाटो की शोभा बखान करते। दूसरे खत मे 'प्रकृति-वर्णन' आदि ही करके रह जाते कभी वे लिखते:

मेरी सुरभि,

आज दिन भर वासंती बयार बहती रही। गगन निर्मल रहा। कभी कभी एकाध अभ्र दल दिखाई भी पड़े तो वे आकर ऐसे उड़ गए कि जैसे मन मे आई एक चिंता दूर हो जाय। धरती पर फूलो

की शोभा न्यारी है। हरी भरी सब क्यारी है! लहलहाती सरसों को देख कर मन नाचने लगता है। पादप समूहों के बीच से पक्षियों का कलरव अत्यंत भला लगता है।....

आदि।

तुम्हारा ही
कमल (या किसी दूसरे
फूल का नाम!)

फिर लिखते:

प्रिय सुब्बारंजिनी,

तुम चली गई हो तो यहाँ बडी झंझट है। कल आटा भी चुक गया है। नौकर पूछ रहा है कि तुम किस दूकान से मँगवाती थी, उसे मालूम नही है। कृपया लिखो। मेरे एक दाँत मे दर्द है। कल उखड़वा दूँगा। मेरे कपडे वाले बक्स में रूमाल किधर रक्खे है?

तुम्हारा
घोरपडे

इस तरह के खत वे अक्सर बीच बीच मे लिख देते थे क्योंकि इसी से तो वे प्रेम की 'मन्नाटोनी' तोड़ते थे। अपने इन्ही प्रयोगो मे वे कभी कभी एक दम 'आफीशियल' यानी सरकारी खतो के 'स्टाइल मे भी अपनी प्रेयसी को पत्र लिखते—

प्रिय महोदया,

आपका दिनांक——का पत्र मिला। धन्यवाद।

निवेदन है कि हम आप की रुचि का भविष्य मे ध्यान रक्खेगे और उसी तरह के कपड़े यहाँ से भेजेगे।

उत्तर शीघ्र दे।

भवदीय

(घसीट मे एक दस्तखत!)

कृते दामोदर विष्णु घोरपडे

एडवोकेट

इन सभी खतों से जब वे ऊब जाते तो हारकर अपनी ठेठ मनोवैज्ञानिक भाषा मे ऐसा कड़ा प्रेमपत्र लिख मारते कि उसे समझने के लिए बडे बडे विद्यार्थी भी चारो खाने चित होकर गिरे! खत इस तरह बेकार न हो जाय इसके लिए वे ऐसे कडे पत्रो मे सदा 'फुट नोट' लगाकर भेजते थे। जहाँ कडा शब्द आया, या जिसके सदर्भ की जरूरत पडी, तहाँ वे १, २, ३ नम्बर लगा कर नीचे फुटनोट मे एक दूसरा नया खत ही लिख देते थे!

रात तो दामोदर विष्णु घोरपडे की यूँ कट जाती थी। काफी देर सोचते थे फिर उससे भी देर तक लिखते थे और फिर उससे भी कम देर तक सोते थे! इस तरह सवेरा हो जाता था।

इन सभी तरह के खतो के जवाब मे सुब्बारजिनी अनुपात मे कम लेकिन वजन मे भारी (अक्सर जिनके लिए घोरपड़े को बैरग के पैसे भी भरने पडे!) चिट्ठियाँ भेजती थी। उन सब मे और कुछ न होता, सिर्फ वही प्रेम का रोना ही मात्र होता! किन्ही किन्ही खतों मे वहाँ के अस्पताल और उनकी सहेली का भी जिक्र रहता लेकिन ज्यादातर उसी तरह के होते जिस तरह के खत बेवकूफ उम्र की लडकियाँ लिखती है। घोरपडे उनको पाकर बड़े मगन होते थे। उस दिन उसे पढ कर दूसरे दिन उसकी याद मे वे अत्यंत मुदित रहते थे। यहाँ तक कि अपने मित्रों और सहयोगियो से वे उसी दिन बाते भी करते!

घोरपडे मे कविता का और गुलाबचद के प्रति बढ़ता हुआ प्रेम देख कर, कृष्णमाधव जी को बडा घोर असतोष हुआ। उन्हे यह विश्वास नही रह गया कि घोरपडे अब उनके सच्चे-मित्र रह गए। इसी लिए उन्होने अपने घनघोर मानसिक असतुलन के कारण अपने विवाह के लिए स्वीकृति दे दी और एक दिन चुपचाप काशी नगरी के एक धनी साहु की बेटी से विवाह भी कर लिया। शादी की सूचना उन्होंने किसी को नही दी ।

दामोदर अपने मे ही खुद इतने डूबे हुए थे कि उनको अपने से अलग किसी दूसरी चीज की चिता ही नही होती थी । इसीलिए उन्होने इस बात की जरा भी परवाह नही की कि उनके परम भक्त कृष्णमाधव जी उनसे अलग अलग हो रहे है ! वे तो अपने खतो, अपने रोमास, अपनी कविता, अपने अचेतन, अपनी पशु प्रवृति और अपने अखबार मे ही भटक रहे थे ! सुब्बारजिनी के खतो की लम्बी लम्बी गड्डियाँ उन्होने बना ली थी और अपने खाली वक्त मे मन बहलाव के लिए, उन गड्डियो को निकाल कर वे अकेले मे पढा करते थे। कोई और न देख ले, इसके लिए वे उन खतो को काफी छिपा कर रखते थे !

एक दिन सबेरे सबेरे ही जब वे रजिनी की बडी फोटो को नया माला पहिना रहे थे और नई अगरबत्ती जला रहे थे तभी उनको उसी कोने की खूँटी पर टँगी दाढी मूँछ और जटा दिखाई पड़ी। सहसा अगरबत्ती जलाते जलाते वे रुक गए । उन्हे अपनी आत्मा की आवाज कमरे मे फिर सुनाई पडने लगी—

'रोमास मे 'विलेन' ही शक्ति देता है ! तेरे रोमास मे खल-नायक शक्तिहीन है ! !'

वे मग्न रह गये। थोडी देर तक वे यही सोचते रहे कि अपनी प्रेमकथा में किस प्रकार अपनी रोमास को शक्तिवान बनाने के लिए अपने खलनायक को वे सक्रिय कर सकते है! अब तक खलनायक के रूप मे जो कुछ हुआ था, वह सचमुच ही नाकाफी था।

वे कमरे मे टहल टहल कर घूमने लगे। कभी कभी वे छज्जे पर भी निकल जाते। उनकी जेब मे रखी हुई 'कैप्स्टन' की 'डिबिया' अधिया गई। धुएँ से सारा कमरा भर गया। इसी समय उनके सिनेमा-ज्ञान ने फिर उनकी सहायता की। उनके चेहरे पर हल्की सी मुस्कान आ गई!

सहसा वकील साहब दाढी मूँछ और जटा लगा कर फिर विष्णु पाडुरग घोरपडे हो गए। उनकी काया मे पाडुरग की आत्मा आ बैठी। वे छज्जे पर कुर्सी पर बैठकर यह सोचने लगे कि आखिर उनके लडके को क्या हो गया है? वे बार बार सोचने लगे कि आखिर वह अब भी इस तरह खोया खोया क्यो रहता है और दिन ब दिन सूख कर काँटा होने की कोशिश क्यो कर रहा है? हो न हो कोई बात जरूर है।

वकील साहब की दाढीदार गार्जियन आत्मा ने सोचा कि लड़के का भेद, इसी के कमरे से पता लगाना चाहिए। यही सोच कर वे उस कमरे मे घुसे जिसमे वह लिखता पढता था। इस तरह का खलनायक यही करता है!!

दामोदर को बाहर गया हुआ मान कर वे आहिस्ता से उस कमरे मे घुसे। चारो तरफ चौकन्नी निगाह डाली। फिर उस कमरे की तलाशी लेनी उन्होने शरू की। पहिले तकिया के नीचे हाथ डाल कर ढूंढा। कुछ नही मिला। फिर उन्होंने ताकिये के सारे गिलाफ

निकाल डाले। उसमे भी कुछ नही मिला। फिर चादर उलट डाली उसमे से भी कुछ हाथ न आया। इल्मारी मे बिछे हुए कागजो के नीचे जल्दी-जल्दी हाथ डाल कर देखा। एकाध कागज मिले भी लेकिन वे सब किसी खास राज का उद्घाटन नही करते थे। फिर किताबो को उल्टा पल्टा। अत मे उन्होने उस दराज को तोड़ कर उसको भी देखने की ठान ली। गार्जियन रूपी वकील साहब ने ताली होते हुए भी उस दराज को तोड़ कर खोल डाला! उसके अंदर जो माल मिला उसे देख कर गार्जियन महोदय उछल पडे!! उसमे वही नीले खुशबू-दार लिफाफो की तीन गड्डियाँ थी जो रेशमी रूमाल मे बँधी थी!!

'तो ये रग है साहबजादे आपके! वही तो मैं कहूँ कि आखिर बात क्या है?' गार्जियन महोदय बोल पडे।

फिर उन्होने एक चिट्ठी खोल कर पढ डाली। ज्यो ज्यो वे एक के बाद दूसरी चिट्ठी पढते गए त्यो त्यो उनकी त्योरी चढती गई। रह रह कर वे अपनी नकली मूँछे मरोडने लगत थे और बडबडाते थे—'लौडे ने खानदान का नाम डुबो दिया! एक बार सफाई करने की कोशिश की लेकिन फिर भी नही मानता!! इश्क लडाता है।' उन्होने अपना चेहरा सुर्ख बनाया और खतो की सारी गड्डी को उठा कर वही मेज पर खोल कर पटक दिया।

कोई आधा घण्टो बाद उसी कमरे मे शीशे के सामने दाढीदार चेहरे और गैर दाढीदार चेहरे का वार्तालाप शुरू हुआ!

जब दाढीदार चेहरे ने डाँट कर पूछा कि ये कैसे खत है और कोई भी शरीफ लडका उसे अपने कमरे मे कैसे रखता है तो बेदाढी दार चेहरा घबड़ा गया। शीशे मे दिखाई पड़ा कि बेदाढीदार चेहरे का रग एकदम उतर गया है और वह जैसे सँस गया है। बेदाढीदार

चेहरे के मुह से बात नही फूटी। उसकी जैसे घिग्घी बँध गई। दाढीदार चेहरा इस बीच खूब गरज गरज कर बातें सुनाता रहा! दाढीदार चेहरे का कहना था कि उसे इस तरह की बेहूदी हरकते सख्त नापसद हैं! बहुत कुछ सुन लेने के बाद बेदाढीदार चेहरे ने सोच कर बताया कि वह सब खत उसके किसी दोस्त के है और वह अपने मनोविज्ञान के अध्ययन के सिलसिले मे उन्हे ले आया था! मगर दाढीदार चेहरा पुराना घाघ मालूम पडता था। वह इन सारे हथकडो को जानता बूझता हुआ लगा।

दाढीदार चेहरे ने अपनी जटा फटकारते हुए, जैसे नाटक मे सचमुच दुर्वासा ऋषि का पार्ट करते हुए, दाढी पर हाथ रख कर जोर से कहा—

'एक तो तू इस तरह बाजारू लोगो की तरह इधर उधर अपना दिल लगाता फिरता है, औरतो को चिट्ठियाँ लिखता है, उनकी रद्दी रद्दी चिट्ठियाँ न सिर्फ मँगाता और पढता है बल्कि उन्हे सहेज कर भी इस तरह रखता है गोया अपने हिसाब रामायण रख छोड़ी हो!'

बेदाढ़ी वाले चेहरे ने बीच मे रोक कर कहा—

'नही पिता जी! आप ठीक से समझ नही रहे है। बात यह है कि...'

दाढीदार चेहरे ने जोर से डाँट कर कहा—

'चुप रहो! बदतमीज! मुझको सिखा रहे हो कि मैं समझता नही हूँ। निकल जाओ घर के बाहर! ऐसे लड़के का मैं मुह भी नहीं देखना चाहता! मै समझ लूँगा कि मेरे लड़का ही नहीं था!'

बेदाढ़ीवाला चेहरा कुछ देर तक चुप खड़ा रहा। उसने सोचा

कि दाढ़ी वाले चेहरे का गुस्सा अभी थोड़ी देर मे ठडा पड जायगा और सब मामला ठीक हो जायगा। लेकिन उस दिन दाढीदार चेहरा 'ट्रेजेडी' लाने के लिए जैसे उधार खाए बैठा था! वह शात नही हुआ। उसने फिर गर्जना की—

'तुमने अभी सुना नही? मै कह रहा हूँ घर से बाहर निकल जाओ! मै नही चाहता कि लड़के के साथ साथ उसका बाप भी बदनाम हो! . . खडे क्या हो? कह रहा हूँ कि अभी, इसी वक्त फौरन मेरे घर के बाहर निकल जाओ! नालायक। डूब मर!!'

हार कर बेमूँछ दाढ़ी वाला चेहरा उठा और उठ कर दाढी मूँछ खूंटी पर टाँगता हुआ घर के बाहर चला गया। घर की कुंडी चढ़ा-कर वह अपने घर के सामने चबूतरे पर पड़ा पडा रात भर सुबकियाँ लेता रहा।

०

दस

दूसरे दिन सुबह जैसा कि बे मूँछदाढीदार चेहरा सोच रहा था, वही हुआ—यानी दाढीमूँछदार चेहरे से अपने ही लडके की यह कुगति देखी नही गई। उसने उसे भीतर घर में बुला लिया। उसे कुछ खाने पीने को दिया ताकि उसकी रात भर की सुलगी हुई पेटाग्नि किसी तरह शात हो सके। खाना पीना खा लेने और सब तरह से फुर्सत पा लेने पर मूँछदाढीदार चेहरे ने समझाना शुरू किया—

'देखो! जवान लडका दोस्त के बराबर होता है! उसे इस तरह समझाने बुझाने और सजा देने के लिए नही कहा गया है। वह अपना भला बुरा खुद समझता है। लेकिन मै तुम्हारा बाप हूँ। मुझसे यह नही देखा जाता कि तुम इश्क के चक्कर में पडकर कौडी के तीन हो जाओ। आज तक जाने कितने ही लोग इस तरह औरत के फेर में पड़ कर, अपनी आबरू गवाँ चुके है!! बड़े-बडे आशिकों के के नाम व्यंग मे ही लिए जाते है! मजनूं बनने के लिए आप पैदा नही हुए है। दुनियाँ मे बहुत से काम पड़े है। कुछ और कीजिए!!'

बेमूँछदाढीदार चेहरे पर जैसे एक मौत की सी उदासी छाई रही। शीशे में देख कर इस तरह की उदासी कैसी होनी चाहिए, यह दामोदर ने पता लगा लिया था।

तभी दाढ़ीदार चेहरे ने अंतिम चेतावनी दी—

जिन्हें यह पाषाण अगर बत्ती दान
मिलने न देगा कभी !
मै तो हूँ असहाय
निरुपाय !
लगता है अब न जीवन मे मिल पाएँगे
हमारे उर के फूल न खिल पाएँगे !
न खिल पाएँगे--
गेऽ गेऽऽ ऽऽऽ गे ! !
.. ..
तुम मुझको जाओ भूल
जैसे पथ का गड़ा एक शूल
(चुभता है, लेकिन निकाल कर फेक देते है जिसको !)
मेरी रानी !
मेरी बात मानो ! !
जो है आत्मा का प्यार
वह अमर है, अजिर है, चिर है !
(इसीलिए निगलते समय दाँतो मे करता किर किर है !)
मै भी शरीर से दूँगा तुम्हे बिसार
जैसे फटे कपड़े देते है सब उतार
ओ सुब्बारजिनी !
दुष्टन-मद-गंजिनी ! ! (यह लाइन वे नही लिखना चाहते
थे लेकिन अपने आप लिख उठी !)
सुहासिनी !
प्रयागवासिनी ! !

मेरी बात मानो
मन मे भूल जाना, जानो !
भूलना ही तेरे मन मे अडे
मस्नेह--
दामोदर विष्णु घोरपडे ! !

पत्र समाप्त करते ही वे जैसे निष्प्राण हो गए। उनकी उँगलियों थर थर काँप रही थी। उनकी आँखो के सामने अँधेरा छा रहा था। वियोग को पूर्ण बनाने तथा गार्जियन-जन्य ट्रैजिडी को सफल बनाने के लिए उन्होने एक अत्यत मर्मघाती महत्वपूर्ण कदम उठाया था। उनके आँसू उसी तरह बहने लगे। वे चुपचाप बिस्तर पर पड़ गए। तकिए को बड़ी देर तक अपनी बाँहों मे कसते रहे और 'ओह ओह करके 'मुझे भूल जाओ' का मंत्र पढते रहे। धीरे धीरे वे अपनी नीद के झोके में आकर इलाहाबाद के कमला अस्पताल के ऊपर जैसे मँडराने लगे।

०

ग्यारह

कई दिनो से इधर घारपड़े चिंतित थे। उनका मानसिक संतुलन बिगड़ गया था। किसी काम मे उनका जी नही लगता था। कविता और कवियों के घनचक्कर में जितना ही घुसने की चेष्टा करते थे उतनी ही जोर से उन्हे उबकाई आती थी। घोरपडे परेशान हो गए थे। इसका एक कारण था। इधर तीन हफ्ते से सुब्बारंजिनी की कोई भी चिट्ठी नही आई थी। जब से उन्होंने अपने पत्र में अपनी और समाज की मजबूरियो का उल्लेख करते हुए एक कवितापूर्ण पत्र भेजा था, और आग्रह किया था कि सुब्बारंजिनी इन्हें भूल जाय, तब से सचमुच उधर से, यानी इलाहाबाद से कोई पत्र नही आया था। एक हफ्ते तक तो घोरपड़े स्वयं ही वह पत्र लिख कर इतने दुखी रहे कि उन्हे यह याद ही नही आई कि इस पत्र का जवाब भी आना चाहिए। दूसरे हफ्ते से वे डाकिए को रास्ते में रोक रोक कर अपनी चिट्ठी के बारे मे पूछने लगे। इनाम पाने वाला डाकिया, इस तरह की जिज्ञासा को बड़ी सहानुभूति के साथ सुनाता और समझाता था। तीसरा हफ्ता शुरू होते होते उनकी चिंता का वारपार न रहा। हर तरह के ख्याल उठ उठ कर उनकी चेतना को झकझोरने लगे। उन्होंने सोचा कहीं सारे नाटक को, और इस तरह उलाहने के ढंग से, अपनी विवशताओं का जो उल्लेख उन्होंने किया था, वह रंजिनी ने सच न मान लिया हो। वे सोचते कि इसक

भय अधिक हो भी सकता है क्योकि उन्होने अपने नाटक को कहीं भी अस्वाभाविक नहीं रहने दिया था। सोचते सोचते वे अपने मानसिक अनुशासन की इस सफलता पर एकाएक मुस्करा उठे!

दो एक दिन वे यही सोचते रहे कि किस तरह वे पुनः अपना सदेश सुब्बारंजिनी तक पहुंचाएं। खत लिखने की बात वे कई बार सोच चुके थे लेकिन हर बार उनके इस विचार ने उन्हे रोक दिया। जब वे स्वयं ही यह लिख चुके है कि 'मुझे भूल जाओ' तब खत के द्वारा फिर हाल चार पूछना, निश्चित ही (यदि बीच मे कुछ न हुआ हो तो) योजना को बिगाड़ देगा और वे अपना तप भग कर बैठेगे!

मगर फिर उनकी पशु प्रवृत्ति ने जोर मारा। घोरपडे की समझ मे यह आया कि औरत अगर पास रहे तो भी उसको इस ढग से रखा जा सकता है कि विरह की स्थिति बनी रहे। बार बार उनको नर-मादा के बारे मे लिखे अपने पुराने लेख याद आने लगे! बहुत सोच विचार कर, अपने मनोविज्ञान की सहायता लेकर उन्होने एक दिन इलाहाबाद सुब्बारजिनी के पास जवाबी तार भेजा। दो दिनों तक बराबर वे उसकी अपलक प्रतीक्षा करते रहे किन्तु अबकी उत्तर न पाकर उन्हें वैसा ही धक्का लगा जिस तरह घोटू विद्यार्थी अपना नाम 'रिजल्ट' में से गायब देख कर पाता हो, समझ न पाए कि बात क्या है? डाकखाने से इलाहाबाद कमला अस्पताल टेलीफोन किया। चूंकि बता चुका हूं कि वह परम लीलामय भी तमाशा देखने का शौकीन है, इसलिए कुछ ऐसी जुगुत भिडी कि उस समय वे अस्पताल मे मौजूद न निकली। हाँ दफ्तर से यह अलबत्ता पता चल गया कि सुब्बारजिनी वहाँ काम करती है और फिलहाल एकदम स्वस्थ है।

यह जानकर कि सुब्बारजिनी 'स्वस्थ' है, आज पहली बार वकील

साहब को घबडाहट हुई। आखिर जब 'मिस सुब्बारंजिनी' स्वस्थ भी है तो फिर जवाब न आने का क्या कारण है।?

डाकखाने से घर न जाकर वे सीधे परमभक्त कृष्णमाधव जी के घर पहुचे। अपना विवाह कर लेने के बाद कृष्णमाधव जी अपनी पत्नी के ही साथ अधिक समय बिताते थे। इधर दो तीन महीनों से उन्होने घोरपडे जी के घर की ड्योढी नही लाँघी थी । परमभक्त जी को यह भी विश्वास था कि उनको 'गुलाबचन्द 'सिरीवास्तो', बरबाद कर देगे। जिसके बारे मे कृष्णमाधव जी के मन मे पूरी श्रद्धा थी और जिसे वे अपना मित्र समझने की अपेक्षा गुरू ही अधिक समझते थे, उसका इस प्रकार पतन देख कर उन्हें जो ग्लानि हुई थी, वह उन्होने इसी तरह व्यक्त की थी। यद्यपि वे घोरपडे के घर पर आते जाते नही थे लेकिन जिस तरह के वे जानकार आदमी थे, उनके अनुसार बडी आसानी से घोरपड़े के बारे मे सब कुछ पता लगाए रखने मे कृष्णमाधव जी समर्थ रहते थे। मगर चूँकि वे इस बीच इस सारे नाटक से अनभिज्ञ रक्खे गए थे, इसलिए वे यह नही जान पाए थे कि रजिनी के इलाहाबाद जाने के बाद क्या हुआ। दरअसल जानते तो वे यह भी नही थे कि रजिनी इलाहाबाद क्यो गई! परम भक्त कृष्णमाधव जी अब विश्वनाथ जी के मदिर में जाकर कीर्तन भजन करते थे।

अपने ऊपर इस तरह एक आकस्मिक विपत्ति सी आई देख कर, घोरपडे को फिर परम भक्त की याद आई। वे जानते थे कि वही आदमी इस कुसमय मे काम आ सकता है। घोरपडे यह समझते थे कि कौन आदमी किस काम के लिए उपयुक्त है और वे समय पर उसका उपयोग करने मे कभी चूकते भी नही थे। मनोविज्ञान शास्त्र का

एक यही व्यवहारिक उपयोग वे किया करते थे। इस काम मे आगे कुछ भी सहायता लेने के लिए वे गुलाबचंद को बेकार आदमी समझते थे।

घोरपड़े ने कृष्णमाधव जी के दरवाजे की कुंडी खटखटाई। ऊपर से ही परम भक्त जी ने झांक कर देखा तो घोरपडे खडे दिखाई पड़े। आज पहिली बार उनके दरवाजे पर वकील साहब आए थे। गुलाबचंद से विरोध मानने के कारण वे वकील साहब से भी खिचे ही रहते थे लेकिन आज इस तरह उनको अपने दरवाजे पर खडा हुआ देखकर उनकी सारी ग्लानि दूर हो गई। उनकी पुरानी श्रद्धा फिर उमड़ आई। वे दौड कर नीचे आए और अपनी बैठक मे उन्हे लेजाकर प्रेम से बिठाया।

'कहिए आज कैसे इतने दिन बाद एकाएक इधर आ निकले?' परम भक्त कृष्णमाधव जी ने हाथ जोड कर कहा।

'क्या बताऊँ भई, आजकल बडी परेशानी मे पड गया हूँ। तुम तो जानते ही हो रजिनी इलाहाबाद गई थी, मगर तब से उनका कोई हाल चाल ही नही मिला। पता नही वे कहाँ है और उनका क्या हुआ? तुम तो जानते हो! इलाहाबाद में शायद तुम्हारे कोई मित्र भी है जहाँ वे ठहरने वाली थी।'

'हाँ हाँ! मै आज ही चिट्ठी लिखकर पूछता हूँ। पता चल जायगा।'

'चिट्ठी विट्ठी से काम नहीं चलेगा। मै तो सोचता हूँ कि एक दिन के लिए वहाँ हो आया जाय। आखिर इलाहाबाद तो यहाँ से बहुत दूर भी नही है। तुम चल सकते हो?'

'हाँ हाँ! चल क्यों नही सकता! अरे लीजिए वकील साहब! अब उनका पता हम न लगाने जायंगे तो क्या कोई और जायगा?

आप भी चलिए। भगवान भोलानाथ चाहेगे तो वहाँ पहुंच कर हम लोग भाभी जी को एकदम स्वस्थ ही पायेगे।'

'हाँ ऽऽ। देखो!!' घोरपड़े बोले। टेलीफोन करके जो कुछ भी उन्होने पता किया था, उसे वे बड़ी आसानी के साथ पचा गए।

'तब फिर कल ही सुबह चले चलो । मै कल कचहरी न जाऊँगा घोरपड़े ने कहा।

'चलिए। सुबह की गाड़ी पर आपको मिल जाऊँगा। आठ बजे।'

घोरपड़े घर वापस आए। किसी तरह दिन भर तैयारी करते रहे। उनका दिल घबड़ा रहा था। ज्यों ज्यों बिस्तर का बंधन बाँधते त्यों त्यों उनका दिल धड़कता था। उनकी उंगलियाँ काँप रही थी। पता नही क्या बात है कि चिट्ठी अब तक नही आई, यही सब सोचते सोचते उन्होंने अपनी अटैची में सब समान रख लिया।

दूसरे दिन घोरपड़े, कृष्णमाधव जी के साथ इलाहाबाद पहुंच गए।

रास्ते भर वे वकील साहब को दिलासा दिलाते रहे। घोरपडे उस सारी सहानुभूति के लिए 'हूँ हूँ' करते रहे। इलाहाबाद पहुचते ही वे सीधे कमला-अस्पताल पहुचे। खुद भीतर नही गए। कृष्ण-माधव जी को भेज कर पता करवाया। उन्होने वापस आकर बताया कि आज अस्पताल मे उनकी छुट्टी है। उनके घर का पता भी दफ्तर से वे मालूम कर लाए थे। दोनो तत्काल सुब्बारजिनी के निवासस्थान चल दिये।

दरवाजे पर रुक कर फिर घोरपडे का दिल धडकने लगा। पता नही क्यो, वे यही सोच रहे थे कि यहाँ भी रजिनी नही मिलेगी। चूकि घोरपडे का सच्चा प्रेम था, इसलिए जो कुछ उनका मन कह रहा था, वही हुआ। रजिनी वहाँ भी नही मिली। परमभक्त कृष्ण माधव जी, जो यहाँ भी दरवाजा खटखटाने के लिए आगे आगे गए थे, उदास निराश यह सदेश लेकर लौटे आए कि रंजिनी जी कचहरी गई है और वहाँ वे सिविल मैरिज रजिस्टर करने वाले मजिस्ट्रेट के इजलास मे मिलेगी। सहसा सिविल-मैरिज का नाम सुनकर घोरपड़े को तो फिर एकदम कँपकँपी छूट गई! वे घबड़ा गए। आखिर हुई हुआई शादी को फिर से सिविल मैरिज में रजिस्टर कराने की क्या जरूरत आ गई? रंजिनी ने उस रोमाँस नाटक में यह कार्यक्रम कहाँ से निकाल लिया? यह तो मूल योजना में कही था ही नही!! घोरपडे का दिमाग एकदम फिरकी की तरह नाच रहा था और तबीयत हरी होने के लिये बेचैन हो रही थी! उनकी बोली एकदम गायब हो गई थी! कृष्णमाधव जी बार बार कह रहे थे—

'आखिर इतना तो पता चल ही गया कि भाभी जी स्वस्थ हैं और हैं!! यह भी पता चल गया कि इस वक्त कचहरी गई हैं सिविल

मैरिज वाले इजलास मे। होगी कोई उनकी दोस्त, जिनकी शादी मे गवाही वगैरह देने चली गई होगी।! आखिर इसमे परेशानी की क्या बात है ?'

लेकिन इसमें जो परेशानी की बात थी, वह परम भक्त जी नही समझ सकते थे ! ज्यो ज्यो वे ढाढस बँधाते थे त्यो त्यो दामोदर का दिल और भी घबडाता था ! भावी आशका के समय यदि कोई धीरज बँधाए तो खूब रोने का जी होता है। लेकिन अपने डूबते मन को मनोविज्ञान की डोर पकडाए वे उस अथाह समुद्र मे गोते खिला रहे थे।

कचहरी भी आ गई। घोरपडे जी के पांव मन मन भर के हो रहे थे। तबीयत चाह रही थी कि वे उसी रिक्शे पर ही बैठे रह जाय। कृष्ण माधव जी ने तब तक वह इजलास ढूँढ निकाला। दोनो पहुँच कर चुपचाप किनारे पडी एक बेंच पर अदालती कमरे मे बैठ गए। कुछ कुछ सन्नाटा लग रहा था। मजिस्ट्रेट की कुर्सी खाली थी। घोरपडे और उनके परम भक्त मित्र सोचने लगे कि जब इजलास शुरू होगा तो यही रजिनी से भेट हो जायगी अन्यथा लौट कर घर पर मिल लेंगे। अब आगे चलना घोरपडे के बूते नही था। तभी घोरपडे सहसा मजिस्ट्रेट के पेशकार और पुलिस के एक हवलदार के बीच होने वाली बातचीत से चौंक पडे।

पेशकार साहब काफी बुजुर्ग थे। उनकी आँखो पर का चश्मा, जिसकी एक कमानी उन्होने तागे से बना रक्खी थी, बातचीत के दरम्यान काफी नीचे ऊपर चढता था। पोपले मुह मे पान की दबी हुई गिलौरी उनके लहजे को एक खास रस के साथ व्यक्त करती थी। वे कह रहे थे—

'हवलदार साहब! अब पुराने जमाने हवा हो गए। हमारी अपनी बीवियों को जाने दीजिए! आजकल की लौंडियाँ दूसरे रंग में रहती हैं। मजाल क्या जो नाक पर मक्खी बैठ जाय! अब तो यह (एक गाली देकर!) तलाक पर उतर आती है! जिसे देखिए! शौहर छोड़ने को तैयार! हुँ हुँ! ब्याह न हो गया कोई पन्सारी की दूकान हो गई! यह न लेंगे, अब वह लेंगे! अजी मियाँ बेचारे तो फिर इसी भर के हो जायगे!!'

इतना कहकर उन्होने फिर अपनी पान की डिबिया निकाली और एक पान हवलदार साहब की तरफ बढ़ाया। हवलदार साहब कुछ रसीले जवान थे। लगता था कि इत्तिफाक से पुलिस मे भरती हो गए थे। पान खाकर बोले।

'अजी जाने भी दो पेशकार साहब! आजकल की लौंडियो के तो नक्शे ही नही मिलते! मगर हुआ क्या? आज साहब के इजलास मे कोई नया किस्सा आया था क्या?'

पेशकार ने कहा--

'नया पुराना क्या! सब एक से ही होते है। एक मदरासिन थी। साज आई थी। यही अस्पताल मे काम करती है। एक को छोड़कर साज दूसरे के साथ अपना पट्टा लिखवा ले गई!!'

हवलदार ने जैसे किस्सा बढ़ाने के लिए जिज्ञासा की--

'तो हुआ क्या? क्या पुराने वाले मे कुछ अनबन थी? कि उसने कोई दूसरी जोरू रख ली? मर्द सालो का भी तो कोई ईमान नही होता! औरत ही क्या करे?'

मर्द के नाम पर लाछन सुनकर पेशकार साहब को जैसे कुछ ताव आ गया!

'अजी मर्द को क्या कहते हो? इस मदरासिन का मर्द कोई नेक और सीधा आदमी है! उसने इसे एक चिट्ठी मुहब्बत में लिखी कि इस परीशानी से अच्छा कि तू मुझे भूल जा! बस! यह लौंडिया, उसको लेकर यहाँ चली आई और कहने लगी कि 'अब बस मैं उसको भूल गई!!' तो मजिस्ट्रेट हुजूर भी क्या करते? जब उस मर्द का खुद अपने हाथो का यह लिखा कागज मौजूद था और औरत उसके साथ रहना नही चाहती थी तो मजिस्ट्रेट बेचारा क्या करता? उसने मंजूर कर लिया और कह दिया कि 'जा अब जिसके साथ मर्जी हो तिसके साथ रह! बस चट वही दूसरा खड़ा था, उसने उसका हाथ पकड लिया। मजिस्ट्रेट क्या करे? उसका काम तो लिखना होता है! बस उसने दूसरे मर्द का नाम लिख लिया!! .अजी हवलदार साहब! अब तुमसे क्या छिपा है? यह सब पहिले की लगी लगाई रहती है! मर्द बेचारे पर तो कोई भी जुर्म लगा कर उसे नालायक साबित किया जा सकता है!'

हवलदार साहब ने हूँ हूँ तो कर दी लेकिन मन से वे एकदम ऐसा नही मान रहे थे ऐसा उनके चेहरे से लग रहा था। लेकिन चूँकि उन्हे राज ही उस अदालत मे हाजिरी देनी पड़ती थी, इसलिए पेशकार साहब से बेकार की हुज्जत करके वे मुफ्त मिलने वाला एक पान खोना नही चाहते थे! हुँकारी भरने के बाद उन्होने सलाम किया और अदालत के कमरे से बाहर चले गए!

घोरपडे जी इतना सब सुनकर भी कलेजे पर पत्थर रक्खे बैठे हुए थे। अकेला देखकर उठे और पेशकार साहब के पास जाकर बोले—

'कचहरी का काम कब से शुरू होगा?'

'शुरू होगा?' पेशकार साहब हँस पड़े। 'अजी साहब अब तो

आज का काम खत्म होने को आ गया? हुजूर उठकर चले गए। आज एक ही 'केस' था वह हो गया।' उन्होंने आगे कहा।

'आज कोई सुब्बारजिनी जी तो नही आई थी?'

'अजी साहब? आप अच्छा मजाक कर रहे है! उन्ही का तो केस था! अपने पुराने शौहर को शायद चोरघड़े या घोरचढ़े को उन्होंने तलाक दे दिया है। अब तो किसी बंगाली से उन्होंने शादी कर ली हैं। शायद मुकर्जी है कि चटर्जी! पता नही! देख कर कहिए तो बता दूँ!' उनका चश्मा एक एक वाक्य के आरोह अवरोह पर नाच रहा था!

घोरपड़े ने तीसरे वाक्य के बाद और कुछ नही सुना। वे कटे पेड़ की नाई गिरना चाह रहे ही रहे थे कि साथ आए हुए परम भक्त कृष्ण माधव जी काम आए!

पेशकार साहब भी घबड़ा उठे दौड़कर पानी लाए। घोरपड़े एकदम जैसे बेहोश होने लग गए। उनके मुह से एक ही शब्द निकला—

'हाय री मनोग्रंथि!

०

बारह

०

एक कमरा है।

कमरे के बीचोबीच एक गोल मेज है जिसपर ताँबे का हवनकुड रक्खा हुआ है। उसमें से गूगुल की महक निकल रही है ।कमरा महक से भर गया है।

कमरे की खिड़कियों और दरवाजों पर मोटे मोटे सफेद कैनवेस के पर्दे लटक रहे हैं जिनसे पारदर्शन तो क्या, शायद हवा भी कभी भूल कर नही घुस सकती।

कमरे की दीवारों पर का रंग भी अब सफेद हो गया है। उनपर और किसी चीज के कोई निशान नहीं दिखाई पड़ते है। एक आध जगह ज्यादा खुरची हुई लगती हैं—शायद वहाँ दीवारों पर चित्र बने हुए थे!!

दीवारों पर बड़े बडे फ्रेम में भारत के प्रमुख अखबारों के प्रथम पृष्ठ की पूरी साइज शीशो मे लगी हुई है। कुछ एक दिमागी तस्वीरें हैं जिनमें मस्तिष्क की शिराओ को नीली और लाल रोशनाई से दिखाया गया है। कुछ छोटी छोटी फोटो भी है जिनके नीचे लिखा है—सिरिल बर्ट, फ्रायड, मैकड्गल ! एक तरफ एक औरत के शरीर का ढांचा बना हुआ लगा है जिसके नीचे दर्ज है—रहस्यमय प्रयोगशाला !

कमरे के एक कोने मे एक प्रस्तर मूर्ति का धड वाला भाग रक्खा है। उल्टे बाल, बगाली काट का कुर्ता, गले में चादर—देखने से ही पता चलता है कि किसी बंगाली का धड़ है!!

कमरे के एक किनारे एक तख्त पडा हुआ है। उसपर एक शीतल-पाटी पडी हुई है। ढीले ढाले वस्त्र पहिने उसपर बैठे हुए है एडवोकेट दामोदर विष्णे घोरपडे। सामने उनका भरा हुआ हुक्का रक्खा है। पास ही एक चौकी पर उपनिषदो की प्रतियाँ रक्खी हुई है और उसपर रक्खा हुआ है ताजा अखबार। उनके ठीक सिर के ऊपर चित्र है। चित्र मे दो साँड लडते हुए दिखाए गए है। उन दोनों को देखती हुई एक गाय सहमी खडी है।

दो ही महीने के भीतर घोरपडे का जैसे कायापलट हो गया है। वे अब अपने मनोविज्ञान से मन की शांति निकालना चाह रहे है! सब कुछ खोकर भी उन्होने जो मनोविज्ञान का सत पाया था उसे ही वह संजीवनी-बूटी की तरह सिद्ध करके मानव कल्याण के हित अपण करना चाहते है!!

उनका सारा दृष्टिकोण बदल गया है। कमरे से उन्होने अपनी कथित पत्नी की फोटो हटा दी है। उसकी जगह उन्होने एक बडा सा कद्दे-आदम शीशा लगा लिया है! रोज सुबह उठकर वे उसमे अपना चेहरा देखते है और फिर मुस्करा कर अपने को ही माला चढ़ाते है। वे फिर अगर बत्ती की जगह गुगुल सुलगा कर अपनी नाक बासते है और इस प्रकार अपने से ही अपने अहम् की तुष्टि करते है!! वे अब चारपाई पर नहीं सोते!

वे रंजिनी को तो अपने मानसिक अनुशासन से लगभग भूल गई चीज ही समझते है लेकिन वे बगाली को नही भूल पाते। उसी के लिए उन्होंने एक बंगाली परिवेश धारण किए एक युवक का धड बनवा कर कमरे में रखवा लिया है! किन्तु उस धड़ को देखकर वे

बगाली तक ही याद करके रह जाते है। उससे आगे वे अपनी स्मृति को अपने गागिगि-अनुगानन से नही बढने देते!

उनके कमरे मे कोई ऐसी पुरानी चीज नही है जिसे देखकर किसी पुरानी बात की याद आ सके। सब चीजो को क्रम से घोरपड़े जी ने हटवा दिया है। उनके पास अपने पिता विष्णु पाडुरंग घोरपडे का जो चित्र था उसे भी उन्होंने बक्स मे रख दिया है। हॉ, उसकी जगह किनारे वाली खूँटी पर अब भी वह दाढ़ी मूँछ और जटा ज्यो की त्यो विराजमान है। वे अब इस दाढ़ी मूँछ की पूजा करते है। उसपर भी रोज माला चढ़ाते हैं।

वैसे तो घोरपडे सब कुछ भूल गए है। उन्हे यह भी याद नही रहता कि वे बनारस मे है या इलाहाबाद में। अक्सर वे खोये खोये हो रहते है। फिर भी घोरपडे इधर एक किताब लिखना चाह रहे है। किताब का शीर्षक पहिले ही से दे दिया गया है इसलिए बता रहा हूँ—उसका नाम होगा: 'प्रेम का दुष्परिणाम!'

वकील साहब चुपचाप बैठे सिगरेट की जगह हुक्का पीते रहते है। कभी कभी कोने मे टगी दाढ़ी मूँछ और जटा की तरफ टकटकी बॉध कर देखा करते है। अक्सर वे अपने कमरे के तख्त पर बैठे शून्य मे इस तरह चुटकी से किसी चीज को पकड़ने की चेष्टा करते पाए जाते है जैसे वे किसी टूटी आस्था के बिखरे तारो को पकड़ने लपक रहे हों।

कई बार गजानन चौधरी और परम भक्त कृष्णमाधव जी ने सुझाया कि कमरे का यह मनहूस रंग और उसकी हवा वे बदल डालें लेकिन घोरपड़े यही कहते हैं कि 'अभी समय नही आया!'

o

वकील साहब ने अपने कमरे का रंग दुबारा फिर कैसे, कब और क्यों नीला करवाया, किस चक्कर में पड़ कर अपना ढीला ढाला गेरुए कपड़े का बाना बदला, और कैसे बीने गुलाबचंद की सहायता से अपना खोया हुआ 'राज्य' वापस लिया—

इसे जानने के लिए आप कलेजे पर पत्थर रख कर, अभी तक अकल्पित, किसी दूसरे खण्ड की प्रतीक्षा अगर करते बने तो कर डालिये ! ❀

०

❀यह मजाक 'भूतनाथ ने रानी तेजमती को कैसे छुडाया, अगले भाग में पढ़िये' के अतर्गत किया गया ! !

मुद्रक :—महाबीर प्रसाद, प्रेम प्रेस, कटरा, प्रयाग ।